साम्यवाद का संदेश

लेखक—

सत्यभक्त

साम्यवाद का सन्देश



लेखक—

श्रीयुत सत्यभक्त



भूतपूर्व सम्पादक 'प्रणवीर' और 'साम्यवादी' तथा
'अगले सात साल' और 'आयरलैण्ड के
ग़दर की कहानियाँ' आदि के लेखक।

पुस्तक मिलने का पताः—



नवयुग पुस्तक भण्डार
इलाहाबाद सिटी

अक्टोबर १९२९



मूल्य—आठ आने

मुद्रक व प्रकाशक——
पं० काशी नाथ बाजपेयी
विजय प्रेस, प्रयाग।

भूमिका

साम्यवाद संसार का सब से प्रभावशाली और महत्वपूर्ण वर्तमान आन्दोलन है। इस आन्दोलन का सम्बन्ध बच्चे और बुड्ढे; स्त्री और पुरुष; गरीब और धनकुबेर; निर्बल और शक्तिशाली; मूर्ख और विद्वान सभी से हैं। यह आन्दोलन किसी विशेष देश या जाति या धर्म से ताल्लुक नहीं रखता। संसार के प्रत्येक भाग, प्रत्येक देश, प्रत्येक राष्ट्र, प्रत्येक जाति, प्रत्येक सम्प्रदाय, प्रत्येक मज़हब के साथ इसका एक समान सम्बन्ध है। यद्यपि पचासों करोड़ मनुष्य ऐसे हैं जिन्होंने इसका कभी नाम नहीं सुना। इसके सिद्धान्तों पर किसी तरह का ज्ञान रखने वाले लोगों की संख्या संसार भर में शायद दस सैकड़ा से भी कम होगी। पर यह ऐसा स्वाभाविक आन्दोलन है कि जो कोई मनुष्य शरीर धारी इस भूमण्डल पर सांस लेता है उसका हिताहित—इतना ही नहीं वरन् उसके जीवन का आधार किसी न किसी दृष्टि से इस आन्दोलन पर निर्भर है।

सच पूछा जाय तो साम्यवाद एक अनादि आन्दोलन है। दुनियां के लोग अपने-अपने मज़हबों, धार्मिक सम्प्रदायों को अनादि बतलाते हैं। पर वास्तव में अगर कोई असूल या आन्दोलन अनादि कहा जा सकता है तो वह साम्यवाद ही है।

जब से मनुष्य जाति निपट जङ्गली और पशु-दशा से छूट-कर सभ्य बनने लगी, और उसमें ग़रीब और अमीर अथवा शासक और शासित का आविर्भाव होकर आर्थिक और सामाजिक असमानता का श्रीगणेश हुआ, उसी दिन साम्यवाद के आन्दोलन का बीज पड़ गया। क्योंकि इस प्रकार की मनुष्य निर्मित असमानता, अन्याय का ही रूपान्तर या एक नया नाम है। ऐसी असमानता के फल से एक मनुष्य के हृदय में असन्तोष, प्रतिकार का भाव उत्पन्न होता है और दूसरे के हृदय में दम्भ, अहंकार और हराम खोरी की वासना पैदा होती है। यही इस हलचल, कशमकश आन्दोलन की जड़ है, जिसको आजकल साम्यवाद, कम्यूनिज्म या बोलशेविज्म के नाम से प्रकट किया जाता है।

संसार के दूसरे देशों और भागों की तरह भारतवर्ष भी साम्यवाद के आन्दोलन से खाली नहीं है। यद्यपि यह खेती किसानी का मुल्क है और इसलिये यहाँ साम्यवाद के आन्दोलन का वैसा प्रत्यक्ष रूप देखने में कम आता है जैसा वह यूरोप और अमरीका के कला-कौशल और उद्योग-धन्धे वाले देशों में देखा जाता है। तो भी इस आन्दोलन की जड़ यहां मज़बूती के साथ जमी हुई है, उसकी वृद्धि के कारण भी पूर्ण-मात्रा में मौजूद हैं, और अनुकूल अवसर पाते ही उसका प्रत्यक्ष में पूरे जोर के साथ प्रकट हो जाना वैसा ही निश्चित है जैसे सूरज का हर रोज सुबह निकलना। वैसे आजकल भी बड़े-

बड़े शहरों में जहाँ कल-कारखाने हैं यह आन्दोलन पश्चिमी देशों के ढङ्ग पर ही जोरों से चल रहा है। ख़ास कर जब से इस देश के शासनकर्ता इसका विरोध करने लगे हैं; इसे दबाने की फिक्र करने लगे हैं, तब से इसका नाम भी काफी फैल रहा है और सभी पढ़े लिखे लोग, जो इससे विशेष अनुराग भी नहीं रखते, समाचार-पत्रों के द्वारा इसके सम्बन्ध में कुछ बातें सुन चुके हैं।

ऐसे अवसर पर पाठकों को यह छोटी सी पुस्तक, जिसमें साम्यवाद के कुछ पहलुओं का सीधी सादी तौर पर वर्णन किया गया है अवश्य ही पसन्द आयेगी। इसमें 'नवयुवकों से दो बातें' शीर्षक लेख योरोप के एक प्रसिद्ध विद्वान प्रिन्स क्रोपाटकिन के लेख का अनुवाद है। इसमें बड़ी प्रबल और अकाट्य युक्तियों से यह सिद्ध किया है कि वर्तमान समय में साम्यवाद द्वारा ही मनुष्य-जाति की सच्ची सेवा हो सकती है और नवयुवकों के सामने इससे महान और परोपकारी आदर्श दूसरा नहीं हो सकता। 'तालाब की कहानी' भी एक अङ्गरेज़ी लेख के आधार पर लिखी गयी है। यह आजकल के जमाने में चारों तरफ़ फैली हुई आर्थिक हलचल और बेकारी के रहस्य को स्पष्ट करने वाला बड़ा अच्छा रूपक है। साम्यवाद के अनुसार व्यापारियों और कारखाने वालों का नफ़ा ही, जिसे अङ्गरेजी में Surplus Value (बढ़ी हुई क़ीमत) कहते हैं, सब प्रकार की आर्थिक हल चल की जड़ है। इस रूपक

में अगर 'पानी' का मतलब मनुष्य-जीवन की उपयोगी और आवश्यक सब प्रकार की सामग्री का समझ लिया जाय तो पाठक उसके द्वारा वर्तमान समय की आर्थिक-हलचल और बेकारी का रहस्य पूरी तरह समझ सकेंगे और उसकी तह में पहुँच जायँगे। के 'श्रमजीवियों सन्देश' और 'बोलशेविज्म क्या है?' दो छोटे छोटे लेख हैं जिनको मैंने कई वर्ष पहले लिखा था और जिनमें इस आन्दोलन की मोटी मोटी बात का भारतवर्ष की दृष्टि से वर्णन किया गया है।

ये सब लेख मासिक पत्रों में लेख रूप में या ट्रैक्टों के रूप में छप चुके हैं। आशा है कि पुस्तक के रूप में संग्रह होकर ये अधिक उपयोगी और रुचिकर हो सकेंगे।

प्रयाग
२३-१०-२९

सत्यभक्त।

साम्यवाद का सन्देश !

साम्यवाद क्या है ?



साम्यवाद एक सामाजिक और आर्थिक सिद्धान्त है, जिसका आधार ऐतिहासिक क्रम-विकास है। यह एक विज्ञान है, जिसका सम्बन्ध मनुष्य-जीवन से है। इसका उद्देश्य है मनुष्य-समाज की शीघ्रतापूर्वक उन्नति करना और दुनिया को वर्तमान समय की अपेक्षा अधिक सुखकर बनाना। कुछ स्वार्थी या अनसमझ लोग बतलाते हैं कि साम्यवाद का अर्थ लूट-मार, उपद्रव और मनुष्य के सद्गुणों का नाश है। पर उनका यह ख़याल बिल्कुल ग़लत है। साम्यवाद में कोई ऐसी बात नहीं जिससे मनुष्य-समाज को किसी प्रकार का भय या उसकी हानि हो।

साम्यवाद का उद्देश्य यह है कि उन तमाम चीज़ों पर, जो कि सर्व-साधारण के जीवन के लिए आवश्यक हैं, समाज का अधिकार रहे। इसका अर्थ यह नहीं कि हमारे व्यक्तिगत इस्तेमाल की चीज़ों पर भी समाज का अधिकार रहेगा। साम्यवाद यह कभी नहीं कहता कि मेरे कपड़ों, घड़ी, चश्मा, मेज़,

कुरसी, भोजन के बर्तन आदि पर भी समाज का या पञ्चायत का अधिकार हो जायगा। क्योंकि इन चीज़ों का इस्तेमाल मैं व्यक्तिगत रूप से करता हूँ; और इन पर मेरा अधिकार रहने से दूसरे किसी पुरुष या स्त्री को तकलीफ़ नहीं होती। पर अगर मैं किसी ज़मीन के हिस्से को या खान, रेलवे, कारख़ाने आदि को अपनी सम्पत्ति बतलाऊँ, उन पर अधिकार क़ायम करूँ तो साम्यवाद उसका विरोध करता है। क्योंकि इन चीज़ों का इस्तेमाल मैं व्यक्तिगत रूप से नहीं कर सकता—सिर्फ़ अपने शरीर द्वारा मेहनत करके मैं ज़मीन, खान, रेल या कारख़ाने से कोई कार्य सिद्ध नहीं कर सकता। बिना दूसरे बहुत से लोगों की सहायता के न ज़मीन में खेती की जा सकती है, न रेल चलाई जा सकती है, न खान और कारख़ाने में माल तैयार किया जा सकता है। ये सब कारबार, व्यापार, खेती आदि आजकल के ज़माने में सब लोगों के सहयोग से ही चल सकते हैं, और सबको अपनी जीवन रक्षा के लिए उनकी आवश्यकता है, इसलिए साम्यवाद उन पर किसी आदमी का अधिकार रहना स्वीकार नहीं करता।

आजकल लाखों आदमी जो कारख़ानों, खानों, खेतों वग़ैरः में काम कर सकते हैं, इन चीज़ों के मालिकों की इच्छा न होने से बेकार फिरते हैं। एक होशियार कपड़े बुनने वाला उस समय तक कपड़ा तैयार नहीं कर सकता जब तक कि कारख़ाने का मालिक उसे नौकर न रक्खे। चाहे उसी कपड़े

के अभाव से उस बुनने वाले के स्त्री और बच्चे ठण्ड से मरते हों; चाहे उसके दूसरे भाई को किसी सहायक के अभाव से अपनी ताक़त से बाहर काम करना पड़ता हो, पर उसे किसी एक आदमी के कारण बेकार बैठे रहने को लाचार होना पड़ता है।

साम्यवाद कहता है कि ज़मीन, रेल, खानों, कारख़ानों पर तमाम समाज या देश का अधिकार रहना चाहिए और उनका सञ्चालन किसी एक आदमी के नफ़ा की निगाह से न होना चाहिए, वरन् सब लोगों के फ़ायदे के वास्ते किया जाना चाहिए। साम्यवाद कहता है कि जब पैदावार और बँटवारे के साधनों पर सर्व-साधारण का अधिकार रहेगा तो सब लोगों को काम करने का मौक़ा मिलेगा, पर किसी को शक्ति से बाहर काम न करना पड़ेगा; सब लोगों को कुछ न कुछ समाज के लिए उपयोगी परिश्रम करना पड़ेगा और कोई आदमी जीवन-निर्वाह की आवश्यक वस्तुओं से वञ्चित न रहेगा। साम्यवाद कहता है कि सर्व-साधारण के उपयोग में आने वाली तमाम चीज़ों पर समाज का या पञ्चायती अधिकार हो जाने से दरिद्रता दूर हो जायगी, बहुत से ऐसे दोष मिट जायँगे जो दरिद्रता के कारण पैदा होते हैं, अज्ञान और संयमहीनता जाती रहेगी, और बहुत सी सामाजिक बुराइयों और अपराधों का अस्तित्व भी नहीं रहेगा।

कुछ लोग कहते हैं कि साम्यवाद असम्भव है, क्योंकि

संसार जैसा आजकल है, सदा से ऐसा ही चला आया है और सदा ऐसा ही रहेगा। पर यह कथन बिल्कुल गलत है। न तो संसार की वर्तमान दशा पहले ज़माने के समान है और न आगे चल कर वह आजकल के समान क़ायम रहेगी। जीवन का लक्षण ही परिवर्तन होना है, और परिवर्तन के बिना जीवन सारहीन है। लाखों करोड़ों वर्ष पहले एक ऐसा ज़माना था, जब कि लोग जङ्गलों में नङ्गे फिरते थे, उस दशा से बदल कर अब लोग सभ्य बन कर बड़े बड़े शहरों में रहने लगे हैं और उनके बड़े बड़े राष्ट्र बन गए हैं। सभ्यता का अंत यहां भी नहीं रुक सकता और मनुष्य-जाति में बराबर परिवर्तन होता जायगा। वह उन्नति करती जायगी और ऊँची चढ़ती जायगी। जिस प्रकार पुराने ज़माने के राजाओं और सरदारों की सत्ता बदल कर आजकल सेठ-साहूकारों की सत्ता क़ायम हो गई है, इसी प्रकार आने वाले ज़माने में सेठ-साहूकारों की सत्ता के स्थान में कारीगर, मज़दूरों की अर्थात् साम्यवाद की सत्ता क़ायम होगी।

साम्यवाद के सिद्धान्त के अनुसार सङ्गठित मनुष्य-समाज में श्रम—सब प्रकार की मेहनत-मजूरी—ही सबसे अधिक महत्व की और सन्मान की चीज़ माना जायगा। यह बात संसार के इतिहास में अभूतपूर्व होगी। प्राचीन काल के समाज का सङ्गठन शारीरिक शक्ति के आधार पर किया गया था। उस समय युद्ध में लड़ने वाले क्षत्री और बहादुर राजा लोग ही

समाज में सबसे बड़े लोग माने जाते थे। उस समय का राज्य (शासन-सत्ता) भी सैनिक सङ्गठन का एक अङ्ग था। आजकल समाज का सङ्गठन धन के आधार पर किया गया है। बड़े-बड़े सेठ-साहूकार और कारखानों के मालिक आजकल समाज के मुखिया माने जाते हैं। आजकल के राज्य या शासन-सत्ता का एकमात्र लक्ष्य जायदाद की रक्षा करना है। भविष्य काल के समाज की रचना मानवीय श्रम के सुदृढ़ और विस्तृत आधार पर की जायगी। श्रमजीवी मज़दूर लोग ही उस समाज में सबसे प्रधान समझे जायँगे। उस समय की सरकार या शासन-सत्ता का उद्देश्य मनुष्यों के जीवन की रक्षा और उनके सुख की वृद्धि करना होगा।

आजकल हम जब श्रमजीवी या मज़दूर का शब्द उच्चारण करते हैं तो हमारा मतलब स्पष्ट रीति से समाज की एक ख़ास श्रेणी से होता है। पुराने ज़माने की सैनिकता-प्रधान समाजों में मज़दूर (जिसके लिए प्राचीन भारतीय साहित्य में 'शूद्र' का शब्द प्रयोग किया गया है) सबसे नीची श्रेणी या जाति समझी जाती थी। क्षत्री या सिपाही श्रमजीवियों को अपनी अपेक्षा बहुत ही तुच्छ समझते थे। जो किसान ज़मीन को जोत-बोकर अन्न पैदा करता था, जिसे खाकर लड़ने वाले योद्धा और सरदार मूँछों पर ताव देते थे, उस किसान को सबसे नीचे दर्जे का समझा जाता था। बहुत पुराने ज़माने के साम्राज्यों में, जैसे मिश्र, यूनान, रोम, चीन आदि, मज़दूरों को केवल

नीचे दर्जे का प्राणी ही नहीं समझा जाता था, वरन् उनको निरा .गुलाम ही माना जाता था। सब चीज़ बनाने और पैदा करने का काम .गुलामों और औरतों को करना पड़ता था। औरतों और मज़दूरों की संसार में सब जगह सदा से इसी प्रकार दुर्दशा होती आई है। ये लोग, जोकि संसार की आवश्यकताओं को पूरा करते थे और जिनके परिश्रम पर मनुष्य-जाति की उन्नति का आधार रहा है, समाज में सबसे बढ़कर अत्याचारों के शिकार और पराधीन होकर रहे हैं। अन्त में समय ने पलटा खाया और श्रमजीवी तथा स्त्रियां अपने ऊपर होने वाले अत्याचारों को समझने लगे और समान अधिकार तथा न्यायानुकूल व्यवहार के लिए आवाज़ बुलन्द करने लगे।

श्रमजीवियों की इस जागृति और उन्नति का कारण था मैशीन, कारख़ाने, इञ्जिन, बिजली आदि का आविष्कार और इनके द्वारा सामूहिक रूप से माल तैयार करने की नवीन पद्धति। इस व्यापारिक और आर्थिक क्रान्ति ने श्रमजीवियों और स्त्रियों में एक नई शक्ति पैदा कर दी, समाज में उनका महत्व बढ़ा दिया और उनकी स्वाधीनता का मार्ग खोल दिया। आजकल की धनसत्तावादी (बनियाशाही) समाज में श्रमजीवियों पर उस प्रकार के खुल्लमखुल्ला अत्याचार और अपमान नहीं किये जाते, जैसे पुराने ज़माने के राजाओं और नवाबों के समय हुआ करते थे। पर अब भी श्रमजीवियों को पूँजीपतियों या धनिकों का दास बनकर ही रहना पड़ता है और

सामाजिक दृष्टि से भी उनको धनवानों की अपेक्षा नीच समझा जाता है। आजकल के ज़माने में एक छोटा पूँजीपति भी जो कि ब्याज-भाड़े से रुपया कमाता है, अपने को उस आदमी से श्रेष्ठ समझता है, जोकि मज़दूरी या नौकरी का पेशा करता है। ये पूँजीपति अपनी ज़मीन जायदाद के प्रभाव से विद्या, शिक्षा, संस्कृति आदि में भी दूसरे लोगों से आगे बढ़े होते हैं; उनको उन्नति के सब साधन प्राप्त होते हैं; उनको तरक्की करने का मौका दूसरे लोगों की अपेक्षा बहुत ज़्यादा मिलता है; और जीवन की सब उत्तम वस्तुएँ उन्हीं के हिस्से में आती हैं। श्रमजीवी आजकल के ज़माने में यद्यपि ग़ुलाम या दास नहीं माने जाते, तो भी मनुष्य-समाज में अभी तक उनके साथ एक ग़ैर आदमी के समान बर्ताव किया जाता है। आजकल श्रमजीवी या मज़दूर के शब्द से एक नीच श्रेणी या जाति का बोध होता है, पर भविष्य के साम्यवादी समाज में श्रमजीवी या मज़दूर का शब्द ही नहीं रहेगा, क्योंकि उस समय इस शब्द से समाज को किसी ख़ास श्रेणी का बोध नहीं होगा। उस समय तमाम स्त्री-पुरुष श्रमजीवी होंगे। उस समय संसार के तमाम मनुष्य, सिवाय बीमारों, कमज़ोरों, बच्चों और बुड्ढों के परिश्रम करके जीवन की आवश्यक वस्तुएँ उत्पन्न करेंगे।



नवयुवकों से दो बातें



[यह लेख योरोप के प्रसिद्ध विद्वान् और साम्यवाद के प्रचारक प्रिन्स क्रोपटाकिन का लिखा है। आपने इसको क़रीब पचास वर्ष पहले लिखा था, पर आज भी इसकी उपयोगिता और सच्चाई में तिल भर भी कमी नहीं पड़ी है। यह लेख नवयुवकों को जीवन का सच्चा मार्ग दिखलाता है और उनके सामने एक ऐसा आदर्श उपस्थित करता है जिसपर अमल करने से मनुष्य-जीवन सार्थक हो सकता है।]

आज मैं युवकों से कुछ बातें कहना चाहता हूँ। बूढ़े लोगों को—दर असल मेरा मतलब है दिल और दिमाग़ के बूढ़ों से-इस लेख के पढ़ने का कष्ट न उठाना चाहिये, क्योंकि इसके पढ़ने से सिर्फ़ उनकी आंखें थकेंगी और फ़ायदा कुछ भी न होगा।

मैं कल्पना करता हूँ कि तुम्हारी उम्र आठरह-बीस वर्ष की है, तुम अपने शिक्षाकाल या विद्यार्थी-जीवन को समाप्त कर चुके हो और अब सांसारिक जीवन में प्रवेश कर रहे हो। मैं यह भी माने लेता हूँ कि तुम्हारा दिमाग़ अन्धविश्वास से मुक्त है, जिसको तुम्हारे शिक्षकों ने तुम्हारे भीतर भरने की कोशिश की थी। तुम नर्क-स्वर्ग की बातों से नहीं डरते; और तुम मुल्लाओं तथा पुजारियों की थोथी बातों को सुनने नहीं जाते। साथ ही तुम उन दिखावटी लोगों में से भी नहीं हो, जो पतन

शील जातियों में प्रायः पैदा हुआ करते हैं, जो कि अपने चमकीले भड़कीले कपड़ों और बन्दर की सी शकल को मेले तमाशा में दिखलाया करते हैं, और जो छोटी उमर से ही किसी भी तरह सुख भोगने की बेहद लालसा रखते हैं। बल्कि मैं तो यह मानता हूँ कि तुम एक सहृदय व्यक्ति हो, और इसी कारण मैं तुमसे बातें करता हूँ।

मैं जानता हूँ कि तुम्हारे सामने प्रायः एक प्रश्न आया करता है कि "हमें आगे चलकर क्या करना है?" वास्तव में कोई भी मनुष्य अपनी युवावस्था में यही समझता है कि उसने बहुत वर्षों तक समाज की सहायता के आधार पर जिस किसी विद्या या कला का अध्ययन किया है, उसका उद्देश्य यह नहीं है कि अपने ज्ञान को दूसरे लोगों को लूटने तथा अपना स्वार्थ साधन करने का ज़रिया बनाया जाय। ऐसा व्यक्ति तो अवश्य ही महाभ्रष्ट है और दुर्गुणों से भरा है, जो यह कल्पना नहीं करता कि समय आने पर वह अपनी बुद्धिमत्ता, अपनी योग्यता और अपने ज्ञान को उन लोगों के अधिकार दिलाने में लगायेगा, जो कि आज दुर्दशा और अज्ञान में फँसे पड़े हैं।

मैं माने लेता हूँ कि तुम उन्हीं में से एक हो जिनको इस प्रकार के स्वप्न आया करते हैं! क्या वास्तव में ऐसा नहीं है? अच्छा, तो अब हमको देखना चाहिये कि अपने स्वप्न को सत्य बनाने के लिये मुझको क्या करना आवश्यक है।

मैं यह नहीं जानता कि तुम कैसे घर में पैदा हुए हो। सम्भव है, तुम किसी सम्पत्तिशाली घर के हो, और तुमने विज्ञान के अध्ययन का विचार किया हो; तुम डाक्टर बनना चाहते हो, अथवा बैरिस्टर, या लेखक, या वैज्ञानिक। तुम्हारे सामने एक विशाल कार्यक्षेत्र मौजूद है, और तुम विस्तीर्ण ज्ञान और सुशिक्षित बुद्धि को लेकर कार्यक्षेत्र में प्रवेश कर रहे हो। अथवा इसके विपरीत तुम एक मेहनती कारीगर हो और तुम्हारी विज्ञान-सम्बन्धी शिक्षा स्कूल की साधारण पढ़ाई तक ही परिमित है। साथ ही तुमको इस बात का स्वयं अनुभव प्राप्त करने का मौका मिला है कि वर्तमान समय में श्रमजीवियों मज़दूरों—को कैसी कठिन मिहनत करके गुज़ारा करना पड़ता है।

डाक्टर

अभी मैं पहिली कल्पना पर विचार करता हूँ, इसके बाद दूसरी पर करूंगा। इसलिये मैं यह माने लेता हूँ कि तुमको अच्छी वैज्ञानिक शिक्षा मिली है। मान लो कि तुम डाक्टर बनना चाहते हो।

कल फटे-पुराने कपड़े पहिने एक आदमी किसी रोगी स्त्री को देखने के लिये तुम्हें बुला ले जाता है। वह तुम को ऐसे तंग गली-कूचों में से ले जाता है, जिनमें दो आदमियों का साथ साथ चल सकना भी कठिन है। तुमको एक दुर्गन्धयुक्त स्थान में टिमटिमाते दीपक की रोशनी में ऊपर चढ़ना पड़ता है।

तुम दो, तीन, चार या पाँच गन्दे जीनों (सीढ़ियों) को चढ़ कर एक अँधेरा ठंडी कोठरी में पहुंचते हो और वहां पर रोगी स्त्री को एक टूटीसी चारपाई पर मैले चीथड़ों से ढका हुआ पाते हो। पीले रंग के, मैले कुचैले बच्चे पतले कपड़ों के भीतर ठंड से कांपते हुए आंखे फाड़-फाड़ कर देख रहे हैं। स्त्री का पति उम्र भर किसी कारख़ाने में बारह-तेरह घंटे रोज़ काम करता रहा। अब वह तीन महीने से बेकार बैठा है नौकरी छूट जाना उसके लिये कोई नई बात नहीं है, प्रायः हर साल या समय-समय पर ऐसी घटना हुआ ही करती है। पर पहले जब वह बेकार रहता था तो उसकी स्त्री कुछ मेहनत मजूरी कर लेती थी—शायद वह तुम्हारे ही घर पर चौका बर्तन करती रही हो—और पांच सात रुपया महीने कमा लेती थी। पर अब वह भी दो महीने से बीमार है और समस्त परिवार दुर्दशा के भीषण पंजे में फँसा हुआ है।

डाक्टर साहब, आपने यह तो आने के साथ ही समझ लिया कि इस स्त्री की सारी बीमारी सिर्फ शारीरिक दुर्बलता पौष्टिक भोजन का अभाव और स्वच्छ हवा की कमी की है। आप इसके लिये क्या नुसख़ा तजबीज़ करेंगे ? क्या, प्रति दिन एक सेर दूध ? शहर के बाहर स्वास्थ्यकर स्थान में घूमना-फिरना ? अच्छे हवादार कमरे में सोना ? कैसी विडम्बना है! अगर उसके पास इतनी सामर्थ ही होती तो ये उपाय बिना आपकी सलाह के बहुत पहिले कर लिये गये होते।

अगर तुम में कुछ सहृदयता का भाव है, अगर तुम खुल कर बात चीत करते हो, और यदि तुम्हारे चेहरे से ईमानदारी टपकती है, तो उन लोगों से तुम को बहुत सी बातें मालूम हो सकती हैं। वे तुमको बतलावेंगे कि बग़ल की कोठरी में जो औरत इस बुरी तरह से खांस रही है कि उसे सुनकर तुम्हारा दिल फटा जाता है, वह कपड़े साफ़ करनेवाली एक ग़रीब स्त्री है। नीचे की मंज़िल में रहने वाले सब बच्चे बुखार से पीड़ित हैं। सब से नीचे की मंज़िल में रहने वाली धोबिन इस जाड़े के अन्त तक ज़िन्दा नहीं बचेगी। और बग़ल के मकान में रहनेवाले लोगों की दशा इससे भी बुरी है।

इन सब बीमार लोगों से तुम क्या कहोगे? क्या उनके लिये पौष्टिक भोजन, आब-हवा की तबदीली, हलका परिश्रम करना तजबीज़ करोगे? तुम चाहोगे अवश्य कि तुम ऐसा कर सको, पर तुम कहने का साहस नहीं कर सकते, और तुम दुःखी हृदय से दैव को कोसते हुए वापस चले आते हो।

दूसरे दिन, जब कि अभी तक तुम उस नरक कुण्ड में रहने वालों के भाग्य पर विचार कर रहे हो, तुम्हारा साथी तुमको बतलाता है कि कल एक दरबान उसको बुलाने आया था और वह साथमें गाड़ी भी लाया था। वह उसे सुन्दर महल में रहनेवाली एक श्रीमती के देखने को ले गया। उस रमणी को रात में नींद न आने की बीमारी है। उसने अपना तमाम जीवन बनाव, शृङ्गार, दावतों, तमाशों और अपने बेव-

कूफ़ पति के साथ दांता-किलकिल करने में बिताया है। तुम्हारे मित्र ने उसके लिये तजवीज़ किया—यथा सम्भव कृत्रिम आदतों का त्याग करना, सादा भोजन करना, स्वच्छ हवा में टहलना, शान्त स्वभाव रखना और कोई शारीरिक काम न करने की कमी को किसी अंश में पूरा करने के लिये अपने कमरे के भीतर हलकी कसरत करना।

एक इसलिये मर रही है कि उसे तमाम उम्र न कभी काफ़ी खाना मिला, न काफ़ी आराम। दूसरी इसलिये तकलीफ़ पा रही है कि उसे अपने जीवन में आज तक यही मालूम नहीं हुआ कि मेहनत करना किसे कहते हैं!

अगर तुम उन निर्बल चरित्र के व्यक्तियों में से हो, जो अपने को हर तरह की परिस्थिति के अनुकूल बना लेते हैं, जो अत्यन्त वीभत्स दृश्य को देखकर भी एक शोकसूचक निश्वास तथा शरबत के एक गिलास से चित्त को शान्त कर लेते हैं, तो धीरे-धीरे तुमको इन परस्पर-विरोधी दृश्यों को देखने की आदत हो जायगी, तुम्हारे भीतर पशु-भाव का उदय होने लगेगा, तुम्हारा एकमात्र उद्देश्य सुख-लोलुप लोगों के बीच में रहना बन जायगा, जिससे तुमको कभी दुर्दशाग्रस्त लोगों के बीच में जाने का काम ही न पड़े। पर अगर तुम "आदमी" हो, अगर तुम अपने मनोभावों को कार्यरूप में परिणित करने की इच्छा शक्ति रखते हो, अगर तुम्हारे भीतर पशु-भावने विवेक को नष्ट-भ्रष्ट नहीं कर दिया है, तो एक दिन तुम

अपने मनमें यह कहते हुए घर लौटोगे—"नहीं, यह अन्याय है, यह अधिक समय तक क़ायम नहीं रहना चाहिये। केवल रोगों का इलाज करने से काम नहीं चलेगा, उनके पैदा होने के कारणों को ही रोकना चाहिये। अगर मनुष्यों को भोजन-वस्त्र की सुविधा हो जाय और वे कुछ शिक्षित हो जांय तो हमारे रोगियों की संख्या आधी ही रह जाय और आधी बीमारियां भी लुप्त हो जायँ। चिकित्सा-शास्त्र चूल्हे में जाय! स्वच्छ हवा, पौष्टिक भोजन और साधारण परिश्रम—ये ही सबसे पहली बातें हैं। इनके बिना डाक्टरी की सब बातें चालबाज़ी और धोखेबाज़ी के सिवा कुछ नहीं हैं।

बस जिस दिन ये बातें तुम्हारी अक़ल में आ जावेंगी, उसी दिन तुम साम्यवाद को समझ जाओगे। फिर तुम इसको पूरी तरह से जानना चाहोगे, और अगर तुम परोपकार के सिद्धान्त के महत्व को कुछ भी समझते हो, अगर तुम एक स्वाभाविक दार्शनिक की भांति प्रमाणों के साथ सामाजिक प्रश्नों पर विचार करोगे, तो अन्त में एक दिन तुमको साम्य-वादियों के दल में मिल जाना होगा, और तुम सामाजिक क्रान्ति के लिये हमारी ही तरह उद्योग करने लगोगे।

वैज्ञानिक

पर शायद तुम कहो कि मुझको ऐसे व्यवहारिक धन्धे से कोई सम्बन्ध नहीं। मैं खगोल-विद्या, प्राणी-शास्त्र, या रसायन-शास्त्र में लगकर विज्ञान की उन्नति करूँगा। ऐसे कामका फल

सदा अच्छा निकलेगा, भले ही वह हमको न मिलकर आने वाली सन्तान को मिले।

सबसे पहले हमें यह जानने का उद्योग करना चाहिये कि विज्ञान की उन्नति करने से तुम्हारा उद्देश्य क्या है? क्या यह उद्देश्य केवल आनन्द—उत्कृष्ट आनन्द—प्राप्त करना है, जो कि प्रकृति के अध्ययन से और अपनी मानसिक शक्तियों को किसी काम में लगाकर विकसित करने से मिलता है? उस दशा में मैं तुमसे पूछूँगा कि जो दार्शनिक अपना जीवन आनन्द के साथ व्यतीत करने के लिये विज्ञान का अध्ययन करता है, उसमें और एक शराबी में, जो शराब के नशे से थोड़ी देर के लिये दिल की खुशी हासिल करता है, क्या फर्क है? इसमें सन्देह नहीं कि दार्शनिक ने अपने आनन्द का विषय अधिक बुद्धिमानी से चुना है, क्योंकि उससे शराब की अपेक्षा बहुत गहरा और बहुत स्थायी आनन्द मिलता है, पर इससे ज़्यादा कुछ नहीं! दोनों ही व्यक्ति स्वार्थ पर निगाह रखते हैं और दोनों का उद्देश्य एक ही है, यानी व्यक्तिगत सुख प्राप्त करना।

पर नहीं, तुम कहोगे कि मैं अपने स्वार्थ के लिये यह काम नहीं करता। वरन् मैं विज्ञान की उन्नति के लिये, मनुष्य-जाति के हित के लिये यह काम करता हूँ, मेरे अन्वेषण का यही लक्ष्य रहेगा।

यह भी एक बड़ा मज़ेदार भ्रम है! हममें से जिस किसी

ने पहले-पहल जब विज्ञान का कार्य आरम्भ किया था, तो अवश्य ही एक बार इसका सहारा लिया था। पहले हम भी ऐसा ही कहा करते थे।

पर यदि दर-असल तुम मनुष्य-जाति का विचार करते हो और तुम्हारा उद्देश्य मनुष्य-समाज का हित साधन करना है, तो तुम्हारे सामने एक विकट प्रश्न पैदा होता है। तुम्हारे भीतर समालोचना करने का भाव कैसा भी कम क्यों न हो, तो भी तुम तुरन्त जान सकते हो कि आजकल हमारी समाज में विज्ञान सुखोपभोग का एक साधन मात्र बन गया है, जिससे थोड़े से लोग अपने जीवन को अधिक सुखी बनाते हैं, पर मनुष्य समाज का अधिकांश भाग उस तक पहुँच भी नहीं सकता।

सौ साल से ज़्यादा समय व्यतीत हो गया, जब कि विज्ञान ने विश्वब्रह्माण्ड की उत्पत्ति का निश्चयात्मक रूप से निर्णय कर दिया था। पर कितने लोगों ने उन सिद्धान्तों का अध्ययन किया है, या उस सम्बन्ध में कुछ वैज्ञानिक और आलोचनात्मक ज्ञान रखते हैं? ऐसे लोगों की संख्या शायद कुछ हज़ार होगी। पर उन करोड़ों मनुष्यों के बीच में, जो अभी तक दुराग्रह और अन्धविश्वासों में फँसे हैं और इस कारण धार्मिक ठगों के हाथों में कठपुतली बन जाते हैं, ऐसे ज्ञानी लोगों की संख्या आटे में नमक के भी बराबर नहीं है।

अगर हम इससे कुछ और आगे बढ़कर देखें, तो हमको

विचार करना चाहिये कि विज्ञान ने शारीरिक और चरित्र सम्बन्धी स्वास्थ्य के ज्ञान को फैलाने के लिये क्या किया है? विज्ञान हमको बतलाता है कि अपने शरीरों का स्वास्थ्य क़ायम रखने के लिये हमको किस तरह रहना चाहिये; और किस तरह देश में बसने वाली असंख्य जनता को अच्छी दशा में रखा जा सकता है। पर क्या इन दोनों बातों के लिये किया गया अपार परिश्रम केवल किताबों के भीतर बंद रह कर बेकार नहीं पड़ा है? सब लोग जानते हैं कि यह परिश्रम बेकार पड़ा है। इसका कारण क्या है? कारण यह है कि विज्ञान का अस्तित्व आजकल केवल थोड़े से विशेष अधिकार प्राप्त लोगों के वास्ते है। सामाजिक असमानता के कारण आजकल मनुष्य-जाति दो भागों में बँटी है—एक मज़दूरी करने वाले गुलाम और दूसरे धन-सम्पत्ति के स्वामी पूँजीपति। इस भेद के कारण विवेकयुक्त जीवन व्यतीत करने की सब शिक्षाएँ सौ में से नब्बे मनुष्यों के लिये एक दिल दुखाने वाले मज़ाक के सिवाय और कुछ अर्थ नहीं रखतीं।

मैं तुमको और भी बहुत उदाहरण बतला सकता हूँ, पर बात को ज़्यादा बढ़ाना ठीक नहीं। अगर तुम अपनी तंग कोठरी से, जिसकी खिड़कियों पर धूल जमी हुई है, और जिसमें रखी हुई पुस्तकों की अलमारियों पर सूर्य का प्रकाश भी नहीं पड़ता, बाहर निकलकर चारों तरफ़ आँख खोल कर

देखोगे तो तुमको क़दम-क़दम पर नये प्रमाण मिलेंगे, जिनसे इस मत का समर्थन होगा।

इस समय हमको विज्ञान-सम्बन्धी ज्ञान और आविष्कारों की वृद्धि करने की बिलकुल ज़रूरत नहीं है। सबसे ज़रूरी बात यह है कि जो ज्ञान अभी तक प्राप्त हो चुका है, उसको फैलाया जाय, उसको हर रोज़ के जीवन में काम में लाया जाय, और उसे सर्वसाधारण तक पहुंचाया जाय। हमको ऐसा बन्दोबस्त करना चाहिये कि मनुष्यमात्र विज्ञान के सत्य सिद्धान्तों को जान सकें और काम में ला सकें। इस प्रकार विज्ञान एक शौकिया चीज़ न रहेगा, वरन् मनुष्य के जीवन का आधार बन जायगा। यही न्यायानुकूल बात है—इन्साफ़ का यही तक़ाज़ा है।

इसके सिवाय विज्ञान के हित की दृष्टि से भी यह आवश्यक है। विज्ञान की असली उन्नति तभी होती है, जब कि जनसमूह उसके सिद्धान्तों का स्वागत करने को तय्यार हो। यन्त्र द्वारा उष्णता की उत्पत्ति का सिद्धान्त गत शताब्दी में स्थिर हो चुका था, पर अस्सी वर्ष तक वह किताबों में ही बन्द पड़ा रहा, और उसका उपयोग तभी हो सका, जब कि जनता में भौतिकशास्त्र का काफ़ी ज्ञान फैल गया। डार्विन ने प्राणियों के विकास का जो सिद्धान्त मालूम किया, वह तीन पुश्त के बाद विद्वानों द्वारा स्वीकार किया गया, और वह भी तब, जब कि उनपर सार्वजनिक मत का दबाव पड़ा। कवि

और चित्रकार की तरह दार्शनिक के अस्तित्व का आधार भी वह समाज है, जिसमें वह रहता है और अपने उपदेशों का प्रचार करता है।

पर जब इस प्रकार के विचार तुम्हारे भीतर भर जायँगे, तो तुम समझ जाओगे कि सबसे अधिक महत्व की बात वर्तमान स्थिति में जड़मूल से परिवर्तन करना है; जिस स्थिति के कारण थोड़े से दार्शनिकों के भीतर वैज्ञानिक सिद्धान्त ठूंस-ठूंस कर भर दिये जाते हैं, और शेष जनसमूह उसी दशा में पड़ा रहता है, जिसमें वह हज़ार-पांच-सौ वर्ष पहले था! अर्थात् वह गुलामों या निर्जीव मशीनों की भांति बना रहता है, और सत्य सिद्धान्तों के समझ सकने में असमर्थ रहता है। जिस दिन तुम इस विस्तृत, गम्भीर, उदारतापूर्ण और वैज्ञानिक सच्चाई को पूरी तरह से समझ जाओगे, उसी दिन से तुमको खाली विज्ञान में कुछ मज़ा न आयेगा। तुम उन उपायों को जानने के लिये उद्योग करने लगोगे, जिनसे ऐसा परिवर्तन हो सके, और अगर तुम इस जांच को उसी निष्पक्षता के साथ करोगे, जिसकी सहायता से अब तक वैज्ञानिक अन्वेषणों को करते रहे हो, तो तुम अवश्य ही साम्यवाद के पक्ष को स्वीकार कर लोगे। तुम दिखावटी और भ्रमपूर्ण तर्कों को त्याग कर साम्यवादियों के साथी बन जाओगे। तब उन थोड़े से लोगों के लिये आनन्द के साधन जुटाने का उद्योग करना व्यर्थ समझ कर, जिनके पास अब भी ऐसे साधनों का बहुत

बड़ा हिस्सा मौजूद है, तुम अपने ज्ञान और शक्ति को अत्याचार-पीड़ितों की सेवा में लगाओगे।

यह विश्वास रखो कि जब कर्तव्य-पालन का भाव पैदा हो जायगा और तुम्हारे विचारों और कार्य्यों में सच्ची एकता क़ायम हो जायगी, तो तुमको अपने भीतर ऐसी शक्तियां मालूम होने लगेंगी, जिनके अस्तित्व का तुमको पहले स्वप्न में भी पता न था। अन्त में एक दिन ऐसा भी आयेगा--और वह भी शीघ्र ही—उस समय तक हमारे वर्तमान शिक्षक भले ही जीवित न रहें--जब कि वह परिवर्तन जिसके लिये तुम उद्योग कर रहे हो, उत्पन्न हो जायगा। उस समय जनसमूह के सम्मिलित विज्ञान-सम्बन्धी कार्य से नई शक्ति प्राप्त करके, और श्रमजीवियों (मजदूरों) के बड़े-बड़े सेनादलों की शक्तिशाली सहायता से, जो कि अपने उद्योग का फल संसार की ज्ञानवृद्धि में लगायेंगे, विज्ञान और कलाकौशल की इतनी शीघ्रता से उन्नति होने लगेगी, जिसके मुकाबले में उनकी वर्तमान समय की मन्दगति बच्चों के खेल के समान जान पड़ेगी। तब तुम्हें विज्ञान का मज़ा मालूम होगा, क्योंकि उस इस समय आनन्द का उपभोग तुम अकेले ही न करोगे, बल्कि तुम्हारे साथ साधारण जनता भी होगी।

वकील

मान लो, तुमने क़ानून की परीक्षा पास की है और वकालत का पेशा आरम्भ करने वाले हो। सम्भवतः तुमको अपने भविष्य

के कार्यक्रम के सम्बन्ध में भ्रमपूर्ण धारणाएँ होंगी। मैं मानता हूँ कि तुम एक श्रेष्ठ विचार वाले व्यक्ति हो और परोपकार का महत्व भी अच्छी तरह समझते हो। शायद तुम सोचते होगे कि—"मैं जीवन भर सब प्रकार के अन्याय का लगातार और बलपूर्वक विरोध करता रहूँगा, अपनी समस्त योग्यता क़ानून की विजय के लिये ख़र्च करूँगा, जनता के सामने सर्वोच्च न्याय का आदर्श उपस्थित करूँगा—क्या कोई पेशा इससे श्रेष्ठ हो सकता है?" इस प्रकार तुम अपने और अपने पसन्द किये हुए पेशे के भीतर विश्वास रखते हुए जीवन क्षेत्र में प्रवेश करते हो।

बहुत अच्छा, हम अदालती रिपोर्टों के पन्ने पलट कर इस बात की जांच करते हैं कि वास्तविक दशा क्या है?

अदालत के सामने एक मालदार ज़मींदार आता है, और वह एक झोंपड़ी में रहने वाले किसान को लगान न दे सकने के कारण ज़मीन से बेदख़ल कराना चाहता है। क़ानूनी निगाह से मुक़दमे में किसी प्रकार की उलझन नहीं, क्योंकि जब ग़रीब किसान लगान नहीं चुका सकता, तो उसे ज़मीन पर से क़ब्ज़ा छोड़ देना चाहिये। पर अगर हम इस मामले में वास्तविक घटनाओं की जांच करते हैं, तो हमें कुछ और ही पता चलता है। ज़मींदार अपनी आमदनी को ऐश आराम के कामों में खुले हाथों बरबाद करता रहा है, और किसान को उम्र भर हर रोज़ सख़्त काम करना पड़ा है। ज़मींदार ने अपनी

ज़मींदारी की उन्नति के लिये किसी तरह की कोशिश नहीं की तो भी पचास वर्ष के भीतर उसकी ज़मीन का दाम पहले से तिगुना हो गया है। ज़मीन का दाम बढ़ने का कारण है एक नई रेलवे लाइन का बनना, या किसी बड़ी सड़क का पास होकर निकल जाना, या दल-दल को सुखाकर सूखी ज़मीन बना लेना, या ऊसर ज़मीन को खेती के लायक बनाना, इत्यादि। पर जिस किसान ने अधिकांश में यह सब उन्नति की, उसे इससे कुछ फ़ायदा नहीं हुआ, वह बरबाद हो गया, बौहरों के फन्दे में फँसकर गले तक कर्ज़ में डूब गया, और अब उसमें ज़मीन का लगान अदा करने की भी सामर्थ नहीं रही। क़ानून सदा जायदाद वाले के पक्ष में रहता है, उसका अर्थ स्पष्ट है और उसके अनुसार ज़मींदार न्याय पर है। पर तुम्हारा न्याय का भाव अभी क़ानूनी किस्सों से अवरुद्ध (कुन्द) नहीं हो गया है, तुम इस मामले में क्या करोगे? क्या तुम मान लोगे कि किसान को निकाल कर बाहर सड़क पर डाल दिया जाय? क्योंकि क़ानून की यही मंशा है। अथवा तुम इस बातपर ज़ोर दोगे कि जमींदार को ज़मीन की तमाम बढ़ी हुई आमदनी किसान को वापस कर देनी चाहिये, क्योंकि वह उसी की मेहनत का फल है। यही न्याय का निर्णय है। तुम कौन सा पक्ष स्वीकार करोगे? क़ानून के अनुकूल पर न्याय के विरुद्ध; या न्याय के अनुकूल और क़ानून के विरुद्ध?

अथवा जब किसी कारख़ाने के मालिक के ख़िलाफ़ मज-

दूरों ने बिना नोटिस दिये हड़ताल कर दी हो, तब तुम किसका पक्ष लोगे ? क्या तुम क़ानून का पक्ष लोगे, जिसका अर्थ है मालिक का पक्ष लेना, जिसने किसी हलचल के मौक़े से फ़ायदा उठाकर बेहद नफ़ा लिया है ? अथवा तुम क़ानून के ख़िलाफ़ चलकर मज़दूरों का पक्ष लोगे, जिनको कभी आठ या बारह आने रोज़ाना से ज़्यादा मजदूरी नहीं दी गई, और जिनके स्त्री-बच्चे उनकी आँखों के सामने ही भूखों मर चुके हैं ? क्या तुम उस जालसाज़ी से भरे क़ानून क़ायदे का पक्ष ग्रहण करोगे जो कि, 'इक़रारनामे (प्रतिज्ञा) की स्वाधीनता' का समर्थन करता है ? अथवा तुम सच्चे न्याय का समर्थन करोगे, जिसके अनुसार ऐसा इक़रारनामा, जो कि एक ख़ूब भरे पेट वाले और एक ऐसे आदमी के बीच में हुआ हो, जिसे केवल प्राण-रक्षा के लिये कुछ भी मज़दूरी करने की आवश्यकता है, अथवा जो ताक़तवर और कमज़ोर के बीच में हुआ हो—वह इक़रारनामा ही नहीं समझा जा सकता ।

एक और मुक़दमा देखो । किसी बड़े शहर में एक आदमी बाजार में फिर रहा है । वह किसी दुकान से दो सेर आटा चुराकर भागता है । पकड़े जाने पर जब उससे पूछा गया तो मालूम हुआ कि वह एक अच्छा कारीगर है, जो बिना नौकरी के फिर रहा है, और उसे तथा उसके बाल-बच्चों को चार दिन से एक टुकड़ा भी खाने को नहीं मिला ! दुकानदार से अनुरोध किया जाता है कि वह अपराधी पर दया करके उसे छोड़ दे,

पर वह इन्साफ़ की दुहाई देता है। वह मुक़दमा दायर करता है और उस शख्स को छः महीने की जेल हो जाती है। क्योंकि क़ानून लिखने वाले अन्धे ऐसा ही कह गये हैं! क्या तुम्हारी अन्तरात्मा में समाज के प्रति विद्रोह का भाव पैदा नहीं होता जब कि तुम हर रोज इस प्रकार के फैसले होते देखते हो?

अथवा तुम इस आदमी के ख़िलाफ़ कानूनी कार्रवाई करना उचित बतलाओगे, जिसका पालन-पोषण दूषित रीति से हुआ है, जिसे बचपन से ही खोटे काम करने की आदत डाली गई है, जिसने अपनी तमाम उमर में सहानुभूति का एक शब्द भी नहीं सुना, और अन्त में जिसने कुल जमा एक रुपये के लालच से अपने पड़ोसी की हत्या कर डाली? क्या तुम कहोगे कि उसको फांसी दे दी जाय, अथवा इससे भी बढ़कर, बीस वर्ष के लिये कैद कर दी जाय? क्योंकि तुम अच्छी तरह जानते हो कि वह अपराधी होने के बजाय एक पागल आदमी है, और हर हालत में उनके कसूर के लिये हमारी तमाम समाज दोषी है।

क्या तुम यह दावा करोगे कि ये कपड़ा बुनने वाले मज़दूर जिन्होंने घोर निराशा के वश होकर मिलमें आग लगादी, कैद खाने में डाल दिये जांय? अथवा यह शख्स, जिसने एक छत्रधारी-हत्यारे पर गोली चला दी, जन्म-कैद की सजा पावे अथवा इन बाग़ियों को, जिन्होंने मोरचे के ऊपर स्वाधीनता का झंडा खड़ा किया, गोली से मार दिया जाय? नहीं, एक हजार बार नहीं!

अगर तुम उन बातों को दुहराने के बजाय, जो तुमको स्कूलों और कालेजों में पढ़ाई गई हैं, अपनी अक़ल से काम लोगे, अगर तुम क़ानून का विश्लेषण-जाँच पड़ताल करोगे, और उन दुरूह भ्रमपूर्ण किस्सों को अलग फेंक दोगे, जो कि क़ानून की असलियत को ढकने के लिये बनाये गये हैं, तो तुम को मालूम हो जायगा कि कानून की असलियत यही है कि, बलवानों के अधिकार का समर्थन किया जाय, और क़ानून का मूल स्वरूप है उन सब अत्याचारों को पवित्र बतलाना, जिनका वर्णन मनुष्य-जाति के प्राचीन और रक्त-प्लावित इतिहास में पाया जाता है। जब तुम इस रहस्य को समझ जाओगे, तो तुमको क़ानून के प्रति बड़ी घृणा हो जायगी। तुम समझ जाओगे कि पुस्तकों में लिखे क़ानून का सेवक बने रहने से तुमको हर रोज़ अपनी अन्तरात्मा के क़ानून का विरोध करना पड़ता है। पर इस प्रकार की दुविधा-जनक परिस्थिति सदा कायम नहीं रह सकती। अन्त में या तो तुम अपनी अन्तरात्मा को चुप करके पूरे धूर्त और मक्कार बन जाओगे, अथवा तुम परम्परा की लकीर पर चलना छोड़ दोगे, और सब प्रकार के—आर्थिक और राजनैतिक—अन्यायों का पूरी तरह से नाश करने के लिये हम लोगों के साथ मिल कर काम करने लगोगे।

पर तब तुम एक साम्यवादी कहे जाओगे और तुम्हारी गणना क्रान्तिकारियों में होगी।

इञ्जीइनियर

तुम एक नवयुवक इञ्जीनियर हो और वैज्ञानिक आविष्कारों का उपयोग व्यापार, और कारीगरी में करके मज़दूरों की दशा सुधारने का स्वप्न देख रहे हो। अभी तुम्हें बहुत धोखे खाने पड़ेंगे। पर वह दिन दूर नहीं, जब तुम्हारा यह भ्रम दूर हो जायगा। तुम अपनी तरुण-बुद्धि और शक्ति को लगा कर एक नई रेलवे की योजना तैयार करते हो, जो बड़े ऊँचे स्थानों का चक्कर लगा कर, भारी पहाड़ों के हृदय को छेद कर, दो अलग अलग देशों को शामिल कर देती है, जिनको प्रकृति ने भिन्न बना रखा था। पर जब काम शुरू होता है, तो तुम देखोगे कि मजदूरों के दल के दल अंधेरी सुरङ्गों के भीतर भूख-प्यास और बीमारी से मर रहे हैं, दूसरे बहुत से मज़दूर थोड़े से पैसे और क्षय की बीमारी का बीज लेकर घर लौट रहे हैं। तुच्छ लालच के कारण रेलवे लाइन की एक-एक गज जमीन मनुष्यों की बलि देकर बनाई जाती है। अन्त में जब लाइन तैयार हो जाती है, तो तुम देखते हो कि तुम्हारी यह रेलवे लाइन दूसरे देश पर हमला करने के लिये तोपें और सेनाएं भेजने के काम में लाई जा रही है!

दूसरा उदाहरण देखो। तुम अपनी तरुण अवस्था को एक ऐसा आविष्कार करने में लगाते हो, जिससे माल सहज में बनाया जा सके। बहुत कोशिशों के बाद, बहुत रातों को जाग-जाग कर, अन्त में तुम अपने आविष्कार में सफल होते

हो। तुम उसको व्यवहार में लाते हो और उसका नतीजा तुम्हारे अनुमान से कहीं बढ़ कर निकलता है। दस-बीस हजार प्राणी नौकरी से अलग कर दिये जाते हैं, केवल थोड़े से बच्चों को नौकर रखा जाता है और उनकी हालत भी निर्जीव मशीनों की सी बना दी जाती है। दो-चार या दस-बीस मालदार कारखाने वाले करोड़ों रुपया पैदा कर लेते हैं और राजसी ठाठ से भोग-विलास में रहने लगते हैं। क्या यही तुम्हारा लक्ष्य था!

इसी प्रकार जब तुम आज कल की अन्य यंत्र विद्या सम्बन्धी उन्नति पर विचार करोगे तो तुमको मालूम होगा कि सीने की मशीन के आविष्कार से सिलाई का काम करने वाली ग़रीब औरतों को ज़रा भी लाभ नहीं हुआ। नई तरह की छेद करने की मशीन बन जाने पर भी खान का काम करने वाले मज़दूरों को गठिया की बीमारी के कारण मरना पड़ता है। अगर तुम सामाजिक प्रश्नों पर उसी स्वाधीन भाव से विचार करोगे, जिससे यंत्र-विद्या सम्बन्धी जांच पड़ताल करते हो, तो तुम अवश्य इस निर्णय पर पहुँचोगे कि जब तक दुनिया में निजी जायदाद और मज़दूरी की प्रथा क़ायम है, तब तक हर एक नया आविष्कार मज़दूरों का अधिक भला करने की अपेक्षा उनकी गुलामी को और ज्यादा मजबूत करता है, उनके काम को और भी नीचा बनाता है, व्यापार-संकट के अवसर को बार बार लाता है, और उसके द्वारा केवल वही आदमी फ़ायदा उठा सकता है, जिसको अभी सब तरह का बड़े से बड़ा सुख प्राप्त है।

जब तुम एक बार इस निर्णय पर पहुँच गये, तब तुम क्या करोगे? या तो तुम मिथ्या तर्कों से अपनी अन्तरात्मा को चुप करने लगोगे और अन्त में एक दिन अपनी तरुणावस्था के सच्चे विचारों को सदा के लिये बिदा करके केवल अपने लिये ऐश आराम के साधन प्राप्त करने की कोशिश करने लगोगे। तब तुम ग़रीबों को लूटकर खाने वालों के दल में मिल जाओगे। पर यदि तुम्हारे भीतर सहृदयता का भाव है, तो तुम अपने मनमें कहोगे—"नहीं, यह समय आविष्कार करने का नहीं है। पहले पैदावार तथा सम्पति के वर्तमान अधिकार को बदलने का उद्योग करना चाहिये। जब निजी जायदाद के नियम का अन्त हो जायगा, तब यंत्र-विद्याकी उन्नति होने से मनुष्य मात्र फ़ायदा उठा सकेंगे और ये असंख्य मज़दूर; जो आज कल केवल मशीनों के पुरज़ों के समान बने हुए हैं, तब विचार-शील प्राणी बन जायँगे, और अध्ययन द्वारा विकसित तथा शारीरिक परिश्रम द्वारा तीव्र बनी हुई अपनी बुद्धि का उपयोग कला कौशल की उन्नति में करेंगे। इससे पचास वर्ष के भीतर कला-कौशल की इतनी आश्चर्य-जनक तरक़्क़ी हो जायगी, जिसकी इस समय हम कल्पना भी नहीं कर सकते।

शिक्षक

अब रहे स्कूल-मास्टर, सो उनसे मैं क्या कहूँ—उस स्कूल मास्टर से नहीं जो अपने पेशे को बेगार की तरह समझता है, वरन् उससे, जो कि आमोद-प्रिय छोटे-छोटे बच्चों के दल के

बीच में बैठ कर उनकी विनोद-पूर्ण निगाहों और आनन्द-दायक हँसी से प्रसन्न होता है—उस स्कूल मास्टर से, जो कि उन छोटे बच्चों के दिमागों में मनुष्यत्व के उन आदर्शों का बीज बोना चाहता है, जिनका वह अपनी युवावस्था में विचार किया करता था।

प्रायः मैं तुमको रंजीदा देखता हूँ और मैं जानता हूँ कि तुम्हारी चिन्ता का कारण क्या है? इसी दिन तुम्हारे एक प्यारे विद्यार्थी ने जो यद्यपि भाषा में बहुत होशियार नहीं पर जिसका हृदय बड़ा विशाल है—महाराणा प्रताप की कहानी को बड़े ज़ोश के साथ पढ़कर सुनाया। जब उसने नीचे लिखी पंक्तियों को पढ़ा तो उसकी आंखें चमक रही थीं और ऐसा मालूम होता था कि वह उसी दम तमाम अत्याचारियों का नामो निशान मिटा देना चाहता है।

मारू बाजे बजें कहूँ धौंसा घहराहीं।
उड़हिं पताका शत्रु हृदय लखि-लखि थहराहीं॥
हैं ये कितने नीच कहा इनकौ बल भारी।
सिंह जगे कहु स्वान ठहरिहैं समर मँझारी॥

पर जब वही विद्यार्थी घर लौटकर गया, तो उसके माता-पिता ने, उसके चाचा ने, कस्बे के बड़े महंत, या पुलिस के थानेदार को सलाम न करने के लिये उसे बहुत डांटा फटकारा। उन्होंने उसको दुनियांदारी, अधिकारियों की इज़्ज़त, अपने से ऊंचे दर्जे के लोगों से विनय के सम्बन्ध में बड़ा

लम्बा लेक्चर सुनाया, जिससे अन्त में उसने महाराणा प्रताप की जीवनी को उठा कर अलग रख दिया और सांसारिक उन्नति के उपाय, नामक पुस्तक को पढ़ना शुरू किया।

अभी कल ही तुमसे किसी ने कहा है कि तुम्हारे सब होनहार विद्यार्थी उलटे रास्ते पर चल रहे हैं। उनमें से एक सिवाय अफ़सर बनने का स्वप्न देखने के और कुछ नहीं करता; दूसरा किसी बड़े आदमी का कृपापात्र बनकर गरीबों को लूटता है। तुमने इन लोगों से न जाने कैसी-कैसी आशाएँ की थीं। अब अपने आदर्शों और दुनियां की असलियतके अन्तर को देखकर तुम चिन्ता में पड़े हुए हो।

तुम कुछ समय तक चिन्ता करते रहते हो। पर मैं समझता हूँ कि साल-दो-साल बाद ऐसा समय आयेगा, जब कि बार-बार निराश होकर अन्त में तुम अपने आदर्श ग्रन्थों को आलमारी में बन्द कर दोगे और कहने लगोगे कि महाराणा प्रताप आदमी तो बड़ा स्वाभिमानी और देशभक्त था, पर साथ ही कुछ सनकी भी था। तुम विचार करने लगोगे कि कविता विश्राम के समय में बहुत अच्छी चीज़ है, ख़ासकर उस हालत में, जब कि एक आदमी दिन भर लड़कों को त्रैराशिक पञ्चराशिक का हिसाब समझाते-समझाते थक गया हो। पर तो भी कवि लोग कल्पना के राज्य में विचरण करते हैं, और उनके विचारों से जीवन-निर्वाह करने में कुछ मदद नहीं मिल सकती, और न इन्सपेक्टर आफ़ स्कूल्स के दौरे के समय उनसे कुछ लाभ हो सकता है।



अथवा इसके विरुद्ध यह होगा कि तुम्हारे युवावस्था के स्वप्न बड़ी उम्र हो जाने पर दृढ़ विश्वास के रूप में परिणत हो जायँ। तुम चाहोगे कि मनुष्य मात्र को, चाहे वे स्कूल में पढ़ते हों या नहीं, विस्तृत और मनुष्योचित शिक्षा दी जाय। पर यह देखकर कि ऐसा हो सकना वर्तमान स्थिति में असम्भव है, तुम वर्तमान सामाजिक संगठन की जड़ पर ही कुठाराघात करने लगोगे। तब तुम शिक्षा-विभाग द्वारा नौकरी से अलग कर दिये जाओगे, तुमको स्कूल छोड़कर हम लोगों के बीच में आना पड़ेगा, और हमारे ही साथ काम करना पड़ेगा। तुम दूसरे लोगों को, जिनकी उम्र तुमसे ज़्यादा होने पर भी जिनकी योग्यता तुमसे कम है, समझाओगे कि ज्ञान कैसी मनोहर वस्तु है, मनुष्य-समाज को कैसा होना चाहिये अथवा वह कैसा बन सकता है। तुम साम्यवादियों के साथ मिलकर वर्तमान सामाजिक प्रथा को जड़-मूल से बदलने के लिये उद्योग करने लगोगे, और ऐसा प्रयत्न करोगे, जिससे संसार के लिए सच्ची एकता, सच्चा भ्रातृभाव और अनन्त समय तक क़ायम रहने वाली स्वाधीनता प्राप्त की जा सके।

कला-विशारद

अन्त में मैं तरुण कलाविशारद, मूर्तिकार, चित्रकार, कवि, संगीतज्ञ आदि से पूछता हूँ कि क्या तुम नहीं देखते हो कि जो प्रज्ज्वलित अग्नि-जो स्फूर्ति तुम्हारे पूर्वजों के दिलों में उत्तेजना फूँका करती थी, वह आजकल के लोगों में नहीं पाई

जाती और कला के क्षेत्र में साधारण और विशेषता-हीन कृतियों की ही बहुतायत देखने में आती है?

पर इसके सिवा और हो भी क्या सकता है? प्राचीन काल की घटनाओं को फिर से अवलोकन करने से, या नवीन प्रकृति के दृश्यों का निरीक्षण करने से जो मानसिक प्रसन्नता प्राप्त होती है, उसी से प्रेरित होकर मध्यकालीन युग के बड़े-बड़े प्रसिद्ध चित्रों और मूर्तियों की रचना की गई थी। पर ये साधन इस समय मौजूद नहीं हैं। साथ ही किसी क्रान्तिकारी आदर्श के सामने न होने से कला में जीवन भी नहीं पाया जाता। इन कारणों से हमारी कला का उद्देश्य सिर्फ नक़ल करना रह गया है। हम बड़ी मेहनत करके पत्तों पर पड़ी ओस की बूंदों का चित्र खींचते हैं, गाय के पैर की जैसी की तैसी नक़ल तैयार करते हैं अथवा गन्दे नालों की दम घुटाने वाली गंदगी का, या किसी ऊँचे दर्जे की वेश्या के विलास-भवन का गद्य या पद्य में बारीकी के साथ वर्णन करते हैं।

तुम पूछोगे कि—'यदि ऐसा है तो क्या किया जा सकता है?' मेरा जवाब यह है कि तुम अपने भीतर जो प्रज्ज्वलित अग्नि बतलाते हो, अगर वह धुआं फैलाने वाली धुंधली बत्ती के सिवाय और कुछ नहीं है, तो तुम उसी तरह काम करते रहोगे, जैसे अब तक करते रहे हो। उस दशा में तुम्हारी कला का शीघ्र ही पतन होने लगेगा, और वह व्यापारियों की दुकानों को सजाने का, या थर्डक्लास नाटक-घरों के लिये नाटक तैयार

करने का, या बच्चों का जी बहलाने वाली कहानियां लिखने का साधन-मात्र बन जायगी। अब भी तुममें से अधिकांश लोग उसी रास्ते पर चल रहे हैं और तेज़ी के साथ आगे बढ़ते जाते हैं।

पर यदि तुमको मनुष्य-जाति के प्रति सहानुभूति है, तुम्हारी हृदयतंत्री उनके दुःख-सुख के साथ बजती है, अगर एक सच्चे कवि की भांति तुम जीवन-संगीत को सुनते हो—तो इस शोक-समुद्र का अवलोकन करते हुए, जिसकी ऊंची लहरें तुम्हारे चारों ओर उठ रही हैं, इन असंख्यों लोगों को भूख की ज्वाला से अपने सामने मरते देखकर, इन खानों में मरे हुए लोगों के शवों को देखकर, इन मोर्चों पर पड़ी हुई छिन्न-भिन्न मनुष्य-देहों के ढेरों को देखकर, इन निर्वासितों को देखकर, जो लम्बी-लम्बी कतारों में निर्जन देशों और काले-पानी में अपने शरीरों को गलाने के लिये जा रहे हैं, इस निराशाजनक युद्ध को देखते हुए जिसमें हारने-वालों का कष्ट-जनित चीत्कार और जीतने वालों की धूमधाम स्पष्ट सुनाई दे रही है, बहादुरी के मुक़ाबले में कायरता के और प्रशंसनीय दृढ़ निश्चय के मुक़ाबले में तुच्छ चालबाज़ी के, इन दृश्यों को देखते हुए तुम हरगिज़ उदासीन नहीं बने रह सकते। तुम अवश्य आगे आओगे और अत्याचार पीड़ितों का पक्ष ग्रहण करोगे, क्योंकि तुम जानते हो कि 'सत्यम्' 'शिवम्' 'सुन्दरम्' उन्हीं लोगों के पक्ष में है, जोकि प्रकाश, मनुष्यता और न्याय के लिये संग्राम करते हैं।

क्या करना चाहिए ?

अन्त में तुम मुझसे कहोगे—"बस, चुप रहो ! यह कैसी आफ़त है ! अगर विज्ञान के सिद्धान्तों का अनुशीलन करना अपना शौक पूरा करना है, अगर डाक्टरी लोगों को धोखा देना है, अगर क़ानूनी पेशे का अर्थ अन्याय फैलाना है, अगर यन्त्र-सम्बन्धी आविष्कार केवल लोगों को लूटने के साधन हैं, अगर स्कूल सच्ची व्यावहारिक शिक्षा के अभाव के कारण बन्द कर देने लायक़ हैं, अगर कला कोई क्रांतिकारी आदर्श न होने के कारण पतन को प्राप्त होती है—तो अब तुम्हीं बतलाओ कि मैं आख़िर क्या करूँ ?"

अजी, बहुत काम करने के लिये पड़ा है। एक चित्ताकर्षक काम, एक ऐसा काम जिसमें तुम्हारा आचरण सर्वथा तुम्हारी अन्तरात्मा के अनुकूल रहेगा, एक ऐसा ध्येय जो श्रेष्ठ से श्रेष्ठ और अत्यन्त शक्तिशाली आत्मा के भीतर भी उत्साह भर सकता है ! अब मैं बतलाता हूँ कि वह काम कौन सा है ?

तुम्हारे लिये सिर्फ़ दो ही रास्ते खुले हैं। या तो तुम हमेशा के लिये अपनी अन्तरात्मा को, अपने विवेक की पुकार को, धोखें में डालते रहोगे, और अन्त में एक दिन कह दोगे— "जब तक मैं सब तरह के आनन्द-भोग मज़े के साथ पा रहा हूँ, और जब तक जनता ऐसी मूर्ख है कि वह मेरे रास्ते में बाधा नहीं डालती, तब तक मनुष्य-जाति को चूल्हे में जाने

दो।" यदि ऐसा न हुआ, तो तुम साम्यवादियों में मिल जाओगे, और उनके साथ वर्तमान समाज का जड़मूल से परिवर्तन करने के लिये प्रयत्न करने लगोगे। अब तक हमने जो विश्लेषण (जांच-पड़ताल) किया है, उससे हम इसी निर्णय पर पहुँचते हैं। हर एक बुद्धिमान व्यक्ति, जो अपने चारों ओर की दशा का निष्पक्ष भाव से निरीक्षण करेगा, और जो पुरानी शिक्षा से पैदा होने वाली भ्रमपूर्ण युक्तियों और मित्रों की स्वार्थमयी सम्मतियों पर ध्यान न देगा, वह अवश्य ही इसी युक्तिसङ्गत नतीजे पर पहुंचेगा।

जब हम एक बार इस नतीजे पर जा पहुंचे, तो यह प्रश्न उठता है कि "अब क्या करना उचित है?"

इसका उत्तर बहुत सहज है। उस सङ्गीत और परिस्थिति से अलग हो जाओ, जिसमें तुम रहते हो, और जिसमें आम तौर पर मिहनत करने वाले किसान और मज़दूरों को 'जानवर' के नाम से पुकारा जाता है। तुम साधारण आदमियों के बीच में रहने लगो, और तुम्हारा प्रश्न अपने-आप हल हो जायगा।

श्रमजीवी आन्दोलन

तुम देखोगे कि हर जगह—इंगलैण्ड, फ्रांस, जर्मनी, अमेरिका आदि देशों में—जहां कहीं भी विशेष-अधिकार-सम्पन्न और अत्याचार-पीड़ित लोगों के दो अलग-अलग दल मौजूद हैं, उसी जगह के श्रमजीवियों में एक ज़ोरदार आन्दोलन पैदा हो रहा है। इस आन्दोलन का उद्देश्य सम्पत्तिशाली

दल की चलाई हुई गुलामी को सदा के लिये नष्ट कर देना और न्याय तथा समानता के आधार पर एक नई समाज की नींव स्थापित करना है। अब जनसमूह का काम केवल अपनी शिकायतों के कह देने से नहीं चल सकता। उन दुःख भरे गीतों को गाने से उनको सन्तोष नहीं मिल सकता, जिनको पुराने ज़माने के निरंकुश राजाओं के नीचे दबे हुए किसान गाया करते थे। अब लोग अपने परिश्रम का पूरा मूल्य समझते हुए काम करते हैं, यद्यपि उनके अधिकार के रास्ते में एक नहीं, अनेकों बाधाएं मौजूद हैं। वे सदा इसी बात पर ग़ौर किया करते हैं कि ऐसा क्या उपाय किया जाय, जिससे वर्तमान दशा में, जिसके कारण तीन चौथाई मनुष्य-जाति का जीवन शापग्रस्त या दैवीकोप से पीड़ित के समान हो रहा है, परिवर्तन होकर दुनियाँ में सब का जीवन सुखमय हो जाय। वे समाज-शास्त्र की कठिन समस्याओं पर विचार करते हैं और अपने निर्मल स्वाभाविक ज्ञान, अपने निरीक्षण, और अपने दुःखमय अनुभव से उनको हल करने का प्रयत्न करते हैं। अपने ही समान दुर्दशाग्रस्त अपने दूसरे साथियों का सहयोग प्राप्त करने के लिये वे अपना दल बनाते हैं और अपना संगठन करने की कोशिश करते हैं। वे संस्थाएं बनाते हैं, जिनका काम थोड़े से चन्दे द्वारा कठिनाई के साथ चलता है। वे दूसरे देशों में रहने वाले अपने हमपेशा भाइयों के साथ समझौता करते हैं, और इस प्रकार उस दिन को नज़दीक लाने में, जब कि

विभिन्न राष्ट्रों में युद्धों का होना असम्भव हो जायगा, वे शोर मचाने वाले और मौखिक सहानुभूति प्रकट करने वाले परोपकारी सुधारकों की अपेक्षा बहुत अधिक काम कर दिखाते हैं। इस बात का पता रखने के लिये कि हमारे दूसरे भाई क्या कर रहे हैं, उनके साथ अपना परिचय बढ़ाने के लिये, अपने विचारों की वृद्धि और प्रचार के लिये, वे मज़दूरों के अख़बार निकालते हैं, और उसके लिये उनको न जाने कितनी कितनी कोशिशें करनी पड़ती हैं।

यह कैसा कभी न रुकने वाला संग्राम है! कितनी ही बार थक जाने, प्रतिज्ञाभ्रष्ट हो जाने, अत्याचार का शिकार बन जाने के कारण कार्यकर्तागण कार्यक्षेत्र से हट जाते हैं और उनकी जगह नये कार्यकर्ताओं का प्रबन्ध करना पड़ता है; कभी तोपों और बन्दूकों की गोले-गोलियों से नेताओं का ख़ातमा हो जाता है और तमाम संगठन नये सिरे से करना पड़ता है; कभी भीषण हत्याकाण्ड के फल से सारा काम ही चौपट हो जाता है और फिर नये ढंग से आन्दोलन शुरू किया जाता है। इन सब कारणों से काम को बार-बार प्रारम्भ करने में न जाने कितनी अपरिमित शक्ति व्यय होती रहती है।

श्रमजीवियों के अख़बार उन लोगों द्वारा सञ्चालित किये जाते हैं, जिन्होंने अपने को आहार और निद्रा से वञ्चित कर के थोड़ा-बहुत ज्ञान जबर्दस्ती प्राप्त कर लिया है। उनके आन्दोलन का आधार ग़रीब मज़दूरों से पैसा-पैसा करके इकट्ठा

किया हुआ वह धन है, जिसे वे जीवन की सब से बड़ी आवश्यकताओं को त्याग कर और प्रायः सूखी रोट पर बसर करके बचाते हैं। इन सब कामों को करने के साथ-साथ उनको सदा इस बात का भय बना रहता है कि जब कभी उनके मालिकों को इस बात का पता लग जायगा कि उसका मज़दूर—उसका गुलाम—साम्यवादी हो गया है, उसी दिन से उनके कुटुम्ब को भूखों मरना पड़ेगा।

ये बातें हैं, जो तुमको दिखलाई पड़ेंगी, अगर तुम जनसमूह के भीतर जाओ। इस कभी ख़तम न होने वाले संग्राम में ग़रीब मज़दूर कठिनाइयों के बोझ के नीचे पिसता हुआ इस प्रकार के उद्गार प्रकट करने लगता है :—

"कहां हैं वे नवयुवक, जो कि हमारे पैसे से शिक्षित बने थे? जिनके लिये हमने, जब वे अध्ययन कर रहे थे, वस्त्र और भोजन पहुंचाया था! जिनके लिये हमने अपनी झुकी हुई पीठ पर भारी बोझ उठा कर और खाली पेट रह कर इन मकानों को, इन विद्यालयों को, इन अजायब-घरों को तैयार किया था! जिनके लिये अपना खून सुखाकर इन बढ़िया किताबों को छापा, जिनको हम पढ़ तक नहीं सकते! कहां हैं वे प्रोफेसर, जो कि मनुष्य-समाज के विज्ञान को जानने का दावा करते हैं, पर जिनकी निगाह में एक दुष्प्राप्य कीड़े का मूल्य मनुष्य से बढ़कर है! कहां है वे व्यक्ति, जो स्वाधीनता का प्रचार करते फिरते हैं, पर जो कभी हमारे जैसे प्रति दिन पैरों के तले कुचले

जाने वाले लोगों की सहायता को खड़े नहीं होते ! ये लेखक, ये कवि, ये चित्रकार—ये सब ढोंगी हैं, ये वैसे तो आँखों में आँसू भरकर सर्वसाधारण की दुर्दशा का वर्णन करते फिरते हैं, पर इतने पर भी कभी हम लोगों के पास आकर हमारे काम में मदद नहीं करते !"

इन शिक्षित कहलाने वालों में से कुछ लोग कायरता-पूर्ण उदासीनता का भाव रखकर सन्तोषपूर्वक सुख भोगते रहते हैं, और शेष बहुसंख्यक लोग इन श्रमजीवियों को 'हुल्लड़बाज़' कहकर नफ़रत करते हैं, और अगर कभी वे उनके विशेष अधिकारों पर हमला करना चाहें, तो उनपर झपटने को सदा तैयार रहते हैं।

महत्वाकांक्षी नेता

यह सच है कि समय-समय पर कोई नवयुवक सामने आता है, जो कि फ़ौजी बाजों और मोरचों का स्वप्न देखता है, और जो सनसनी फैलाने वाले दृश्यों और घटनाओं की तलाश में रहता है। पर जैसे ही वह देखता है कि मोरचों की तरफ़ जाने वाली सड़क बहुत लम्बी है, और रास्ते में वह जिन फूलों की आशा करता है, उनके साथ तेज कांटे भी मिले हैं, उसी समय वह जनता के हित की तरफ से पीठ फेर लेता है। बहुत करके ऐसे लोग महत्वाकांक्षी और आवारा आदमी होते हैं, जो कि अपनी पहली कोशिशों में असफल होकर जनसमूह की सहानुभूति प्राप्त करना चाहते हैं। पर अगर कभी जनसमूह उन

सिद्धान्तों को अमल में लाने की कोशिश करता है, जिनका ये लोग स्वयं प्रचार करते हैं, तो ये उसके कट्टर विरोधी बन जाते हैं। और अगर कभी श्रमजीवी इनकी आज्ञा के बिना आगे बढ़ने की चेष्टा करें, तो ये नेता महाशय शायद उनको तोपों का निशाना बनाने में भी संकोच न करें।

इतना ही नहीं, कितने ही आदमी अपनी मूर्खता के कारण जनसमूह का अपमान करते हैं, बड़ा अभिमान तथा ग़रूर दिखलाते हैं, और लोगों की बदनामी करके अपनी कायरता का परिचय देते हैं। जनता के विकास के शक्तिशाली आन्दोलन में मध्यम श्रेणी के शिक्षित नवयुवक ऐसी ही 'सहायता' पहुँचाते हैं!

इस पर भी तुम पूछते हो कि 'हम क्या करें?' क्या तुम नहीं देख सकते कि अभी सारा काम करने को पड़ा है? जनसमूह ने जो महत्त्वपूर्ण कार्य उठाया है, वह इतना विशाल है कि उसमें हज़ारों लाखों नवयुवकों को अपनी तरुणावस्था की समस्त शक्ति, अपनी बुद्धिमत्ता और अपनी योग्यता को काम में लगाकर सर्वसाधारण की सहायता करने का चाहे जितना मौक़ा मिल सकता है।

नया मार्ग

तो फिर क्या करें? सुनो।

अगर तुम विज्ञान के प्रेमी हो, अगर तुम साम्यवाद के सिद्धान्तों को अच्छी तरह ग्रहण कर चुके हो, अगर तुम

क्रान्ति के असली अर्थ को समझ चुके हो, जो कि इस समय भी हमारा दर्वाजा खटखटा रही है; तो क्या तुम इस बात को नहीं समझ सकते कि विज्ञान को नये सिद्धान्तों के अनुकूल बनाने के लिये उसकी हरएक शाखा का पुनः संस्कार किया जाना आवश्यक है? तुम्हारा कर्तव्य है कि तुम इस क्षेत्र में इतनी बड़ी क्रान्ति उत्पन्न कर दो, जितनी पिछले सौ वर्षों की समस्त वैज्ञानिक उन्नति के द्वारा भी नहीं हुई है। क्या तुम नहीं जानते कि आजकल के ऐतिहासिक ग्रन्थ नानी की कहानी की तरह हैं, और उनमें सिवाय बड़े-बड़े बादशाहों, बड़े-बड़े राजनीतिज्ञों और बड़ी-बड़ी राजसभाओं या पार्लामेन्टों के किस्सों के और कुछ भी नहीं है? अब इतिहास भी नये सिरे से लिखा जाना चाहिये, जिसमें बतलाया जाय कि मनुष्य जाति के विकास में साधारण जनता की क्या स्थिति रही। इसी प्रकार अर्थशास्त्र, जो आजकल मालदार लोगों के लूट के धन को पवित्र सिद्ध करने का साधन-मात्र बना हुआ है, फिर से तैयार किया जाना चाहिये। उसके मूल सिद्धान्तों और असंख्य प्रयोगों का आधुनिक रीति से निर्णय करना चाहिये। इसी प्रकार मानव-शास्त्र, समाज-शास्त्र, नीति-शास्त्र में पूरी तरह से परिवर्तन करना चाहिए, और प्राकृतिक-विज्ञान की विभिन्न शाखाओं में भी आधुनिक विचारों के अनुसार पूर्ण-सुधार किया जाना आवश्यक है।

बहुत अच्छा, अब तुम कार्य आरम्भ करो! अपनी योग्यता

को महान उद्देश्य की पूर्ति में लगाओ। ख़ासकर अपनी प्रखर तर्क-शक्ति से हमारे अन्ध-विश्वासों को दूर करने में, तथा अपनी संयोगात्मक योग्यता से हमारे उत्कृष्ट सङ्गठन की नींव क़ायम करने में हमारी सहायता करो। इतना ही नहीं, हमको हमारे नित्य प्रति के विवाद में निर्भयता की उस भावना से काम लेना सिखलाओ, जो कि वैज्ञानिक गवेषणा का मुख्य लक्षण है। और जिस प्रकार प्राचीनकाल वैज्ञानिक अपने जीवन के उदाहरण से दिखला गये हैं, उसी प्रकार तुम भी हमको दिखलाओ कि मनुष्य किस तरह सत्य की रक्षा के लिये अपने प्राण तक दे सकता है।

अगर तुम डाक्टर हो और तुमने कटु अनुभव से साम्यवाद की सचाई को जान लिया है, तो तुम्हारा कर्तव्य है कि बिना किसी तरह ढील किये निरन्तर हमको बतलाते रहो, कि अगर मनुष्यों के रहन-सहन और मज़दूरी की वर्तमान दशा क़ायम रही, तो मनुष्य-समाज तेज़ी के साथ पतन की तरफ़ अग्रसर होता जायगा। तुम जनता को समझाओ कि जब तक मनुष्यों की उत्पत्ति और वृद्धि ऐसी परिस्थिति में होती रहेगी, जो कि स्वास्थ्य-रक्षा के वैज्ञानिक नियमों के सर्वथा प्रतिकूल है, तब तक डाक्टरों की सब दवायें रोगों के मिटा सकने में असमर्थ रहेंगी। लोगों को विश्वास दिलाओ कि यही रोगों का असली कारण है, और आवश्यकता है कि इसको जड़ से उखाड़ कर फेंक दिया जाय। साथ ही लोगों को यह भी बत-

लाओ कि इन कारणों को कैसे मिटाया जा सकता है।

अपने चाकू को लेकर आओ और ऊँचे हुए हाथ से हमारी इस समाज में नश्तर लगाओ, जो कि बड़ी तेज़ी से गलती-सड़ती जा रही है। लोगों को बतलाओ कि बुद्धिमानी-पूर्वक जीवन-व्यतीत करने का मार्ग क्या है, और वह कैसे प्राप्त हो सकता है? एक सच्चे चिकित्सक की भांति इस बात पर ज़ोर दो कि निर्जीव अङ्ग को काट डालना आवश्यक है, नहीं तो वह तमाम देह में विष पैदा कर देगा।

अगर तुमने यंत्र-विद्या और आधुनिक शिलपकला का अभ्यास किया है, तो यहाँ आकर हमको बतलाओ कि तुम्हारे आविष्कारों का क्या नतीजा निकला। अभी तक जो लोग भविष्य के कार्यक्रम पर चलने का साहस नहीं करते, उनको विश्वास दिलाओ कि इस समय तक मनुष्य-जाति जितना ज्ञान प्राप्त कर चुकी है, उसी ज्ञान से बड़े-बड़े आविष्कार किये जा सकते हैं। उनको समझाओ कि अगर कल कारखानों का सङ्गठन सुधार दिया जाय, तो आश्चर्यजनक फल प्राप्त हो सकता है। अगर सब लोग सदा मनुष्य जाति के हित का ख़्याल रखकर चीज़ें उत्पन्न करें तो पैदावार कई गुनी ज़्यादा बढ़ सकती है।

अगर तुम कवि, चित्रकार, मूर्तिकार, या सङ्गीतज्ञ हो, और तुम अपने सच्चे कर्तव्य को पहिचानते हो, अपनी कला के वास्तविक हित को समझते हो, तो हमारे पास आओ। अपनी क़लम, अपनी पेंसिल, अपनी छेनी, और अपने विचारों

को क्रांति की सेवा में लगाओ। अपनी उत्साह-जनक रचना या भावपूर्ण चित्रों द्वारा उस वीरतापूर्ण संग्राम का दिग्दर्शन कराओ, जिसमें जनसमूह अत्याचारियों के विरुद्ध लड़ रहा है। नवयुवकों के हृदय में उस श्रेष्ठ क्रांतिकारी उत्साह की आग भर दो, जिससे हमारे पूर्वजों की आत्माएँ उत्तेजित हुआ करती थीं। स्त्रियों को समझाओ कि जो पति अपना जीवन मनुष्य-जाति के उद्धार के महान-कार्य में उत्सर्ग कर देता है, उसका जीवन धन्य है। लोगों को इस बात का ख़्याल दिलाओ कि उनका वर्तमान जीवन कैसा वीभत्स बन गया है और इस बुराई के कारणों को भी उनको बतलाओ। जनता को समझाओ कि हमारा जीवन कहीं अधिक उत्तम बन सकता है, अगर हमारे मार्ग में से वे बाधाएँ दूर हो जायँ, जो कि वर्तमान सामाजिक सङ्गठन की मूर्खतापूर्ण और शर्मनाक प्रथाओं की वज़ह से पैदा होती हैं।

अन्त में तुम सब लोग, जिनके पास ज्ञान, भाषणशक्ति, योग्यता तथा परिश्रम के गुण हैं, अगर तुम्हारे भीतर सहानुभूति का एक भी कण है, तो स्वयं आओ और अपने मित्रों को भी लाओ; और अपनी सेवा को उन लोगों के लिये अर्पण करो जिनको उसकी सबसे अधिक आवश्यकता है। पर इतना अवश्य याद रखो कि अगर तुम आते हो, तो मालिक बनकर नहीं आते, वरन् एक साथी की, एक सखा की, एक दोस्त की हैसियत से आते हो। तुम हुकूमत करने के लिये नहीं आते, वरन् एक नये

जीवन में प्रवेश करके स्वयं शक्ति प्राप्त करने के लिये आते हो, जिससे भविष्य में तुम उन्नति कर सकोगे और विजय प्राप्त कर सकोगे। तुम्हारा काम केवल लोगों को उपदेश देने का नहीं है, वरन् तुम्हारा मुख्य कर्तव्य है उनकी आकाँक्षाओं को ग्रहण करने का, उनको समझने का, उनको उचित रूप देने का, और तब उन्हें कार्य रूप में परिणत करने का। यह कार्य तुमको बिना किसी तरह के आराम या जल्दबाजी के अपनी तरुण-अवस्था के समस्त उत्साह और जीवन भर के अनुभव को लगा कर पूर्ण करना होगा। केवल ऐसा करने से ही तुम सर्वाङ्गपूर्ण, श्रेष्ठ और विवेक के अनुकूल जीवन व्यतीत कर सकते हो। तब तुम देखोगे कि इस मार्ग में किये गये तुम्हारे सब प्रयत्न पूरी तरह से फलीभूत हो रहे हैं। और जब एक बार तुम्हारे कर्म और तुम्हारी अन्तरात्मा की आज्ञा में इस प्रकार की उच्च-श्रेणी की एकता—तदात्मता—पैदा हो जायगी तो इससे तुम को ऐसी शक्तियां प्राप्त होंगी, जिनकी तुम कभी कल्पना भी न कर सके होगे और जो अभी तक तुम्हारे भीतर सोई हुई पड़ी हैं।

इस प्रकार तुम जनसमूह के साथ रहते हुए सत्य, न्याय और समानता के लिये कभी न रुकने वाला संग्राम कर सकोगे और उसके द्वारा सर्वसाधारण को अपना अहसानमन्द बना सकोगे। किसी भी जाति के नवयुवक इससे बढ़ कर और किस श्रेष्ठ जीवन की आकाँक्षा कर सकते हैं?

इतनी देर बाद मैं धनवान और ऊंची श्रेणीवालों को यह समझा सका कि तुम्हारे जीवन में जो दुबिधा पैदा होती है, उससे छूटने के लिये तुमको लाचार होकर—अगर तुम साहसी और सत्य के प्रेमी हो तो—साम्यवादियों के पास आना होगा, उनके साथ रह कर काम करना पड़ेगा। और उनमें दलभुक्त होकर सामाजिक क्रान्ति की सफलता के लिये उद्योग करना पड़ेगा। अब मालूम होता है कि यह सिद्धांत कैसा स्वाभाविक, और सहज में समझे जाने लायक है। पर जब हम एक ऐसे आदमी को समझाना चाहें, जिस पर धनवानों के पक्षपातियों की बातों और कामों का पूरा प्रभाव पड़ चुका है, तो यह आवश्यक है कि कितने ही मिथ्या-तर्कों का खण्डन किया जाय, कितने ही पक्षपात-जनित भावों को मिटाया जाय, और कितने ही स्वार्थयुक्त ऐतराजों को दूर किया जाय।

गरीब-श्रेणी वाले

अब हम ग़रीब-श्रेणी के नवयुवकों से कुछ कहना चाहते हैं। पर आजकल इसके लिये बहुत विस्तार-पूर्वक समझाने की ज़रूरत नहीं। क्योंकि चाहे तुममें बुद्धि और साहस की मात्रा बहुत कम हो, पर घटनाओं के दबाव में पड़ कर तुमको खुद ही साम्यवादी बनने को लाचार होना पड़ेगा।

जो व्यक्ति श्रमजीवी या ग़रीब-श्रेणी में उत्पन्न होकर अपनी शक्ति साम्यवाद की विजय के लिये ख़र्च नहीं करता, वह यह भी नहीं समझता कि स्वयं मेरा हित किस बात में है,

और साथ ही वह अपने कर्तव्य और प्राचीनकाल से चले आये उत्तरदायित्व से भी विमुख रहता है।

क्या तुमको वह समय याद है, जब कि तुम बिलकुल बच्चे थे और जाड़े के मौसम में एक दिन अपने छोटे से आंगन में खेल रहे थे? उस समय तुम्हारे पतले कपड़ों के भीतर घुसकर ठंड तुमको काट रही थी और तुम्हारे फटे जूतों के भीतर मिट्टी भरी जाती थी। उस समय तुमने कुछ मोटे-ताजे लड़कों को ख़ूब बढ़िया कपड़े पहिन कर बाहर सड़क पर जाते देखा और यह भी देखा कि वे तुम्हारी तरफ़ उपेक्षा के भाव से देखते जाते हैं। उस दशा में भी तुम अच्छी तरह जानते थे कि चाहे ये छोकरे बढ़िया से बढ़िया कपड़े पहिन रहे हैं, पर बुद्धिमानी में, समझदारी में और काम करने की शक्ति में वे तुम्हारे या तुम्हारे साथियों के बराबर नहीं हैं। पर उसके बाद तुमको लाचारी से एक गन्दे कारखाने में बंद रह कर सुबह पांच-छै बजे से शाम तक बारह घण्टे मशीन पर काम करना पड़ा, उसके साथ तुमको भी मशीन बन जाना पड़ा और वर्षों तक प्रति दिन मशीन की अविराम गति और कर्कश स्वर के सहयोग में रहकर बुरी तरह पिसना पड़ा। इस बीच में वे मोटे-ताज़े लड़के बिना किसी तरह की चिन्ता-फिकर के स्कूलों, कालेजों और विद्यालयों में शिक्षा पाते रहे। और वे ही लड़के जो तुमसे बुद्धि में हीन हैं, पर जिनको अच्छी तरह से शिक्षा मिली है, अब तुम्हारे स्वामी बने हुए हैं, और

जीवन के सब सुखों को तथा सभ्यता के सब साधनों का आनन्द के साथ उपभोग कर रहे हैं!

पर तुम्हारा आजकल क्या हाल है? तुम हर रोज़ काम से लौट कर एक छोटे से अंधेरे और सीले हुए घर में आते हो, जिसमें थोड़ी सी जगह के भीतर पांच-छै आदमियों को जानवरों की तरह पड़ा रहना पड़ता है। उसी कोठरी में तुम्हारी मां, जो ज़िन्दगी से बेज़ार हो चुकी है और ज़्यादा उम्र हो जाने से नहीं, वरन् चिन्ताओं के कारण बूढ़ी हो चुकी है, तुमको सूखी रोटी, और पानी जैसी दाल खाने को देती है। तुम्हारे सामने सोचने विचारने के लिये केवल एक ही सवाल रहता है कि "मैं कल दुकानदार को आटे का दाम कहां से दूँगा, और परसों मकान वाले का भाड़ा कहां से चुकाया जायगा?"

क्या तुम इसी प्रकार का दुःख-पूर्ण जीवन व्यतीत करना चाहते हो जैसा तुम्हारे माता-पिता तीस चालीस वर्ष तक भोग चुके हैं। क्या तुम दूसरे लोगों के लिये शरीर, ज्ञान और कला-कौशल सम्बन्धी सब प्रकार के सुख पहुँचाने के वास्ते इसी प्रकार तमाम उम्र परिश्रम करते रहोगे। और तुम स्वयं अनन्तकाल तक इसी चिन्ता में फँसे रहोगे कि कल खाने के लिये रोटी मिलेगी या नहीं? क्या थोड़े से आलसियों को सब प्रकार का ऐश-आराम का सामान मिलता रहे, इसलिये तुम स्वयं सदा के लिये उन वस्तुओं से वंचित रहोगे, जिनसे जीवन का आनन्द प्राप्त होता है? क्या तुम परिश्रम द्वारा

अपने को शक्तिहीन बना लोगे और उसके बदले में, जब कि कठिनाई का समय आवे, दुःख भोगना स्वीकार करोगे? क्या तुम इसी तरह की ज़िन्दगी बसर करना चाहते हो?

शायद तुम इसके लिये भी राज़ी हो जाओ! तुमको जैसी दशा में रहना पड़ता है, उससे बाहर निकलने का कोई मार्ग न देखकर शायद तुम कहने लगो कि—"सारी दुनियाँ इसी प्रकार की दुर्दशा में फँसी हुई है। और जब मैं इस दशा में कुछ परिवर्तन नहीं कर सकता, तो मुझे भी इसे बरदाश्त करना चाहिये। ऐसी दशा में यही उचित है कि हम परिश्रम करते रहें और जिस प्रकार बन सके ज़िन्दा रहने की कोशिश करें।"

बहुत अच्छा! अगर तुम्हारा ऐसा ही विचार है तो किसी दिन जीवन की घटनायें स्वयं तुम्हारी आँखें खोल देंगी।

एक दिन किसी तरह का व्यापार-संकट (व्यवसाय-सम्बन्धी हलचल) आता है—उस तरह का व्यापार-संकट नहीं, जैसे, पहले ज़माने में आते रहते थे और जो थोड़े बहुत दिनों में ख़तम हो जाते थे। वरन् एक ऐसा व्यापार-संकट उपस्थित होता है, जो किसी ख़ास व्यापार, कारीगरी को पूरी तरह से नष्ट कर डालता है, जो हज़ारों मजदूरों को दुर्दशा में फँसा देता है, जो पूरे कुटुम्बों का नामो निशान मिटा देता है। तुम भी दूसरे लोगों की तरह इस आफ़त से बचने के लिये हाथ-

पैर मारते हो। पर शीघ्र ही तुम देखोगे कि किस प्रकार तुम्हारी स्त्री, तुम्हारे बच्चे, तुम्हारे नाते-रिश्तेदार धीरे-धीरे भूख की ज्वाला से पीड़ित होते हैं और तुम्हारी आँखों के सामने ही काल का ग्रास बन जाते हैं! सिर्फ़ भोजन के अभाव से, ख़बरदारी और दवादारू के कमी के कारण वे अपना जीवन एक टूटा चारपाई पर समाप्त कर देते हैं। पर उस समय भी मालदार लोग बड़े-बड़े शहरों की सुन्दर सड़कों पर सजे हुए महलों के भीतर ज़िन्दगी के मज़े उड़ाते रहते हैं, और उन भूखे रहने वालों और मरने वालों का कभी भूलकर भी ख़याल नहीं करते। तब तुम समझोगे कि वर्तमान समाज कैसी घृणित बन गई है। तब तुम व्यापार-संकट के कारणों पर विचार करने लगोगे, और अपनी जाँच-पड़ताल के द्वारा तुम इस निन्दनीय-प्रथा का भेद पूरी तरह से समझ जाओगे, जिसके कारण लाखों मनुष्यों को थोड़े से निकम्मे और तुच्छ लोगों के लालच का शिकार बनना पड़ता है और उनकी कृपापर आधार रखना पड़ता है। तब तुम समझोगे कि साम्यवादियों का यह कहना बिल्कुल सच है कि वर्तमान मनुष्य-समाज का अवश्य ही सिरसे पैर तक फिरसे संगठन किया जाना चाहिये, और ऐसा संगठन किया भी जा सकता है।

अब हम इस सार्वजनिक व्यापार-संकट की बात को छोड़कर तुम्हारी व्यक्तिगत मिसाल पर विचार करते हैं। एक दिन तुम्हारा मालिक तुम्हारी मज़दूरी और भी घटाने की

कोशिश करता है, जिससे तुम्हारे ज़रिये वह दो-चार आने ज़्यादा कमा सके, और अपने धन-भण्डार को और ज़्यादा बढ़ा सके। तुम इस अन्याय का विरोध करोगे, पर वह घमण्ड के साथ जवाब देगा—"निकल जाओ, और घास खाओ, अगर तुम इतनी मज़दूरी पर काम नहीं करना चाहते !" तब तुम समझोगे कि तुम्हारा मालिक तुमको केवल भेड़ की तरह मूँड़ना ही नहीं चाहता, वरन् वह सचमुच तुमको एक नीचे दर्जे का जानवर ही समझता है। वह तुमको नौकरी के ज़रिये अपने निर्दय-पञ्जे में रखने से ही सन्तुष्ट नहीं है, वरन् वह चाहता है कि तुमको पूरी तरह से अपना ग़ुलाम बनाकर रखे। उस वक्त या तो तुम उसके सामने सर झुका दोगे, तुम मनुष्यत्व के गौरव के भाव को तिलाञ्जलि दे दोगे, और हर तरह के बड़े से बड़े अपमान को सहते हुए तुम्हारा जीवन समाप्त होगा। अथवा तुम्हारा ख़ून गर्म हो उठेगा, तुम अपने भीषण पतन को देखकर काँप उठोगे, और तुम उस अभिमानी को जैसे का तैसा जवाब सुना दोगे? तब तुमको नौकरी से अलग होकर रास्ते में मारा-मारा फिरना पड़ेगा, और तुम समझ जाओगे कि साम्यवादियों का यह कहना कितना ठीक है कि—"उठ खड़े हो और आर्थिक-ग़ुलामी के ख़िलाफ़ विद्रोह का झण्डा ऊँचा करो।" तब तुम साम्यवादियों के पास आओगे और उनके दल में स्थान ग्रहण करके इस बात का उद्योग करोगे, जिससे आर्थिक, सामाजिक,

राजनैतिक—सब प्रकार की गुलामी पूरी तरह से नष्ट हो जाय।

स्त्रियाँ

किसी दिन तुम उस मनोहारिणी युवती का किस्सा सुनोगे, जिसकी सुन्दर चाल, निष्कपट बर्ताव, तथा मीठी बोलचाल को देखकर तुम्हारा हृदय प्रसन्न हुआ करता था। वह वर्षों तक अपनी दशा सुधारने के लिये हर तरह का प्रयत्न करती रही, पर अन्त निरुपाय होकर वह किसी बड़े शहर में चली आई। वह जानती थी कि ऐसी जगह में गुजारा कर सकना बड़ा कठिन होता है, तो भी उसे उम्मीद थी कि मेहनत-मजूरी करके कम से कम वह अपना पेट पालन कर सकेगी। पर क्या तुम जानते हो कि उसका क्या परिणाम हुआ? किसी मालदार नौजवान ने उसे मीठी-मीठी बातों से फुसला लिया और उसने अपना सर्वस्व उस युवक को अर्पण कर दिया। पर थोड़े ही दिन बाद वह दूध की मक्खी की भाँति निकाल कर फेंक दी गई और उसके सर पर एक बच्चे का बोझ भी आ पड़ा! वह बड़ी हिम्मत वाली स्त्री थी, और वह बराबर बाधाओं का मुक़ाबला करती रही। पर अन्त में भूख और ठंड की मार को न सह सकने से उसका स्वास्थ्य भंग हो गया और एक खैराती अस्पताल में उसने अपनी जीवन-लीला समाप्त की।

ग़रीब श्रेणी की बहिनो! क्या ऐसी घटनाओं को देखकर

तुम शान्त बनी रहोगी और इसका कोई प्रतिकार न करोगी? जब तुम अपने बच्चे को दूध पिलाती हो और उसके छोटे से सर पर हाथ फेर-फेर कर प्यार करती हो, तब क्या तुम कभी इस बात का भी ख़्याल करती हो, कि अगर समाज की वर्तमान दशा में परिवर्तन न हुआ, तो बड़ा होने पर उसको कैसे दुःख भोगने होंगे? क्या तुम कभी इस बात पर ग़ौर नहीं करतीं कि तुम्हारी छोटी बहिनों और तुम्हारी संतान को भविष्य में क्या-क्या सहन करना पड़ेगा? क्या तुम चाहती हो कि तुम्हारे लड़के भी उसी प्रकार घास-पात की तरह पैदा होकर नष्ट हो जायँ, जैसे कि तुम्हारे बाप नष्ट हो चुके हैं? उनको सदा इसी बात की चिन्ता बनी रहे कि कल रोटी कहाँ से मिलेगी? उनके दिल-बहलाव के लिये सिवाय ताड़ी की दुकान के और कोई स्थान न हो? क्या तुम चाहती हो कि तुम्हारे पति और तुम्हारे पुत्र सदा के लिये उस व्यक्ति की कृपा के भिखारी बने रहें, जिसे उत्तराधिकार में अपने बाप की सम्पत्ति मिल जाय, और जो उनको नौकर रखकर लाभ उठा सके? क्या तुम यही पसंद करती हो कि वे किसी बड़े आदमी के ग़ुलाम बने रहें, बंदूकों के शिकार होते रहें, और दूसरों का माल हड़प करने वाले धनवानों की लाभ की खेती में सदा खाद की तरह अपने हाड़ मांस को लगाते रहें?

नहीं, कभी नहीं, हज़ार बार नहीं! मैं अच्छी तरह जानता

हूँ कि तुम्हारा ख़ून खौलने लगता है, जब तुम देखती हो कि तुम्हारे पति बड़ी उत्तेजना और दृढ़-प्रतिज्ञा के साथ हड़ताल आरम्भ करके, अन्त में हाथ जोड़कर अभिमान से फूले हुए मालिक की अत्यन्त अपमान पूर्ण शर्तों को मंजूर कर रहे हैं। मैं समझता हूँ कि तुम उन वीर क्षत्राणियों को आदर्श मानती हो, जिन्होंने स्वाधीनता की रक्षा के लिये घोर संग्राम में अपने सिर कटाये हैं। मुझे निश्चय है कि तुम उन स्त्रियों को आदर की निगाह से देखती हो, जिन्होंने अत्याचारी हाकिमों को मारकर ग़रीब जनता पर किये जाने वाले अन्यायों का बदला लिया है। और मुझे पूर्ण विश्वास है कि जब तुम विदेशों की उन स्त्रियों का वर्णन पढ़ती हो, जिन्होंने राज्य-क्रांति के समय गोले-गोलियों की झड़ी में खड़ी रहकर अपने घरवालों को उनके वीरतापूर्ण कार्य के लिये उत्साहित किया था, तो तुम्हारा दिल उत्साह से उछलने लगता है।

* * *

इसलिये ग़रीब श्रेणी के नौजवानो! पुरुषो और स्त्रियो! किसानो और मज़दूरो! कारीगरो और सिपाहियो! तुम सब अपने अधिकारों को समझो, और हमारे साथ चलने को तैयार हो! तुम आओ और अपने भाइयों के साथ मिलकर उस महान क्रांति की तैयारी के लिये उद्योग करो, जो कि ग़ुलामी के नाम निशान को मिटा देगी, बेड़ियों के टुकड़े-टुकड़े करके फेंक देगी, पुरानी रद्दी प्रथाओं को तोड़कर बहा देगी, और

समस्त मनुष्य जाति के लिये एक नवीन और विस्तृत सुखी जीवन का मार्ग खोल देगी—बस क्रांति के लिये, जो कि अन्त में समस्त मनुष्य-समाज के बीच, सच्ची स्वाधीनता, वास्तविक समानता और द्वेष रहित भ्रातृभाव की स्थापना करेगी—उस क्रांति के लिये, जो कि सबसे काम करावेगी और सबको काम करने का अवसर देगी; जिसके द्वारा मनुष्य अपने परिश्रम का फल पूरी तरह आनन्द के साथ उपभोग कर सकेंगे, उनकी शक्तियों का पूर्णरूप से विकाश हो सकेगा, और सबका जीवन विवेकयुक्त, मनुष्यत्व के अनुकूल और सुखी होगा।

किसी को यह कहने का मौक़ा मत दो कि हम लोग संख्या में बहुत थोड़े हैं, और इसलिये उस महान-कार्य को सिद्ध करने के लिये, जो कि हमारा लक्ष्य है, बहुत कमज़ोर हैं।

गिनती करके देखो कि जो लोग इन अत्याचारों को सह रहे हैं, वे कितने अधिक हैं।

हम किसान, जो कि दूसरों के लिये मेहनत करते हैं, और जोकि धनवानों को गेहूँ खिलाकर खुद छिलका खाते हैं, हम लोग गिनती में करोड़ों हैं।

हम मज़दूर और जुलाहे, जोकि रेशम और मखमल बुनते हैं, पर ख़ुद चिथड़े लपेट कर रहते हैं, हम भी बहुत बड़ी संख्या में हैं। जब कारख़ानों की छुट्टी की सीटी बजती है, तो हम बड़े-बड़े शहरों की सड़कों और चौकों को समुद्र की लहरों की तरह भर देते हैं।

हम सिपाही, जो कि अफ़सरों के हुक्म या डंडों के द्वारा चलाये जाते हैं; जो कि गोलियों को अपने ऊपर लेते हैं, पर उसके बदले में हमारे अफ़सरों को मेडल और पेन्शन मिलती है; जिनको अपने ही भाइयों के ऊपर गोली चलाने के सिवाय और कोई अच्छा काम नहीं आता—हम भी इतनी बड़ी तादाद में हैं कि जिस दिन हम इन मोटे-ताजे और सजे हुए अफ़सरों के सामने सिर ऊँचा करके खड़े हो जायँगे, जो कि हमपर बड़ी शान के साथ हुकुम चलाते रहते हैं—तो उनके चेहरे बिलकुल पीले पड़ जायँगे।

सचमुच हम सब लोग जोकि हर रोज़ अन्याय सहते हैं और अपमानित किये जाते हैं, मिलकर इतनी बड़ी संख्या में हैं जिसको कोई शुमार नहीं। हम उस महासमुद्र के समान हैं, जो सबको अपने में मिला लेता है—सबको निगल जाता है।

जिस दिन हम उपर्युक्त बातों के करने का दृढ़ निश्चय कर लेंगे, उसी क्षण न्याय स्थापित हो जायगा, और उसी समय संसार के अत्याचारी धूल में मिल जायँगे।

तालाब की कहानी।

किसी जमाने में एक बड़ा सूखा देश था। उस देश के रहने वालों को पानी की कमी से बड़ी तकलीफ़ उठानी पड़ती थी। वे सुबह से रात तक सिवाय पानी तलाश करते फिरने के और कोई काम नहीं करते थे। कितने ही लोग पानी के बिना मर भी जाते थे।

उसी देश में कुछ लोग ऐसे भी थे जो दूसरे लोगों की बनिस्बत ज़्यादा चालाक थे और उन्होंने अपने लिये बहुत सा पानी इकट्ठा कर रखा था। इन लोगों का नाम पूँजीपति था। एक दिन ऐसा हुआ कि उस देश के बहुत से लोग उन पूँजी-पतियों के पास गये और उनसे थोड़ा पानी मांगा। इस पर पूँजी-पतियों ने जवाब दियाः—

"जाओ, तुम लोग बड़े बेवक़ूफ हो। हम अपना इकट्ठा किया हुआ पानी तुमको क्यों देने लगें? क्या तुम चाहते हो कि हम भी पानी के लिए तुम्हारी तरह मारे मारे फिरें। पर देखो, अगर तुम हमारी नौकरी करना मंजूर करो तो तुमको पानी मिल सकता है।"

लोगों ने जवाब दियाः—"तुम हमको पीने के लिए पानी दो, और हम अपने लड़के बच्चों के साथ तुम्हारे नौकर हो जायँ।" ऐसा ही हुआ।

वे पूँजीपति समझदार और ढंग से काम करने वाले आदमी थे। उन्होंने सब लोगों का सङ्गठन करके उनके अलग अलग दल बना दिये। हर एक दल का एक मुखिया बनाया गया। एक दल पानी के चश्मों (सोतों) पर रह कर पानी इकट्ठा करने लगा; दूसरा दल पानी को लाने का काम करने लगा; तीसरे दल के सुपुर्द नये चश्मे तलाश करने और कुएँ खोदने का काम किया गया; चौथा दल पानी लाने के लिये बहुत से डोल और दूसरे बरतन तैयार करने लगा। इस तरह बाक़ायदा काम करने से बहुत सा पानी इकट्ठा होने लगा। उस पानी को रखने के लिये पूँजीपतियों ने एक बहुत बड़ा तालाब बनवाया जिसका नाम 'बाज़ार' था। उस तालाब के सिवाय और किसी जगह से कोई पानी नहीं पा सकता था। जो लोग पूँजीपतियों के नौकर बनकर पानी लाने का काम करते थे उनको भी इस तालाब में से ही पानी लेना पड़ता था। जब लोग पानी भर कर तालाब में लाये तो पूँजीपतियों ने उनसे कहाः—

"देखो, तुम पानी का एक डोल जो चश्मे से लाकर तालाब में डालोगे उसके लिए तुमको एक आना मिलेगा; और जब तुम अपने पीने के लिये तालाब में से एक डोल पानी लोगे तो उसका दाम दो आना देना होगा। बचा हुआ एक आना हमारा नफ़ा होगा। क्योंकि अगर कुछ नफ़ा या बचत न होगी तो हम यह काम क्यों करेंगे? फिर तुम लोग प्यासे मर जाओगे।"

उन लोगों ने पूँजोपतियों के इस क़ायदे को बहुत अच्छा समझा, क्योंकि वे बहुत कम अक़ल रखते थे। वे मुद्दतों तक बड़ी मिहनत और ईमानदारी से तालाब में पानी लाने का काम करते रहे। पूँजोपति उनको एक डोल पानी की मजदूरी एक आना देते थे। और जब वे लोग अपने और अपने बालबच्चों के लिए पानी खरीदते थे तो उनको, एक डोल का दाम दो आना देना पड़ता था।

कुछ समय बाद वह तालाब जिसका नाम 'बाजार' था, लबालब भर गया। क्योंकि लोगों को एक डोल पानी का जो दाम मिलता था उससे वे सिर्फ़ आधा डोल पानी खरीद सकते थे। इस तरह हर बार में आधा डोल पानी तालाब में बढ़ता था। पानी लाने वाले लोगों की तादाद बहुत थी और पूँजीपति बहुत थोड़े थे। वे पानी भा दूसरे लोगों के बराबर ही पी सकते थे। इसलिए धीरे-धीरे तालाब में पानी बढ़ता गया और आखीर में उसमें एक बूँद पानी की भी जगह नहीं रही। यह देखकर पूँजीपतियों ने लोगों से कहाः—

"देखो, अब इस तालाब में जिसका नाम 'बाजार' है, पानी के लिये बिलकुल जगह नहीं है। इसलिये अब तुम पानी लाना बन्द कर दो और जब तक तालाब खाली न हो जाय तब तक अपने घर बैठो।"

पर जब लोगों को पानी लाने के बदले में पैसे मिलने बन्द हो गये तो वे पानी खरीद भी नहीं सकते थे। पूँजीपतियों ने जब

देखा कि तालाब का पानी कोई नहीं खरीदता और उससे उनको जो नफ़ा होता था वह बन्द हो गया, तो उनको भी चिन्ता सताने लगी। उन्होंने आपस में सलाह करके कहाः—“आजकल व्यापार बड़ा मन्दा पड़ गया है, इसलिये हमको पानी बेचने के लिये इश्तहार देना चाहिये।” इसलिये उन्होंने अपने कितने ही आदमी भेजे जो दूर दूर सड़कों पर फिर कर चिल्लाने लगे —“जो कोई आदमी प्यासा हो वह तालाब के पास आकर पूँजीपतियों से पानी खरीदे, क्योंकि उसमें बहुत सा पानी इकट्ठा हो गया है और उसका दाम दो आना डोल से घटा कर सात पैसे का एक डोल कर दिया गया है।”

पर लोगों ने जवाब दियाः—“जब तक तुम हमको नौकर न रखो हम पानी किस तरह खरीद सकते हैं? तुम पहले की तरह हमको नौकर रखो फिर हम खुशी से तुम्हारा पानी खरीदेंगे। फिर तुमको इश्तहार देने या पानी का दाम घटाने की कोई जरूरत न होगी।”

इस पर पूँजीपतियों ने कहाः—“जब तालाब का पानी किनारे पर होकर बह रहा और जमीन में फैलकर बर्बाद हो रहा है, तब हम तुमसे पानी मँगा कर क्या करेंगे? इसलिये तुम लोग पहिले पानी खरीदो और जब तालाब खाली हो जायगा तब हम फिर तुमको नौकर रखेंगे।”

इस तरह हालत जैसी थी वैसी ही बनी रही। क्योंकि पूँजीपति पानी लाने के लिए लोगों को नौकर नहीं रख सकते

थे और लोग बिना मज़दूरी पाये पानी खरीद नहीं सकते थे, जिसको कुछ दिन पहले उन्होंने ख़ुद ही इकट्ठा किया था। यह देखकर सब लोग कहने लगे कि यह 'व्यापार-संकट' का समय है।

अब लोग प्यास के मारे बड़ी तकलीफ़ पाने लगे। क्योंकि अब उनके बाप-दादों के जमाने की तरह हरएक आदमी को पानी ढूंढ सकने की आजादी नहीं थी। अब चश्मा, कुओं, पानी की रहट, पानी भरने के बरतन, वगैरह सब चीजों पर पूँजीपतियों का कब्जा था। कोई आदमी सिवाय बाजार-रूपी तलाब के और किसी जगह से पानी नहीं पा सकता था। इस सबब से लोगों में बड़ी भारी नाराजी फैलने लगी और वे पूँजीपतियों खिलाफ़ बातें करने लगे। उन्होंने पूँजीपतियों से कहाः—

"देखो, पानी तालाब में से ज़मीन पर गिर कर बरबाद हो रहा है और हम प्यासे मर रहे हैं। हमको थोड़ा पानी दो जिससे हमारी जान बचे।"

पूँजीपतियों ने जवाब दियाः—"ऐसा हरगिज नहीं हो सकता।" और तब वे लोग आपस में कहने लगे—"व्यापार, व्यापार के ढंग से ही किया जाता है। अगर हमारे पास ज़्यादा माल है तो क्या हम उसको लुटा देंगे।

पर पूँजीपतियों को भी दिल के भीतर चिन्ता लगी हुई थी। क्योंकि कोई उनसे पानी नहीं खरीदता था और उनका

कारबार बन्द पड़ा था। वे आपस में कहने लगेः—"ऐसा मालूम होता है कि हमने पहले जो बहुत फ़ायदा उठाया था उसी के सबब से अब हमारा नुकसान हो रहा है। पर इसका क्या सबब है कि हमारा लाभ हमारी हानि का कारण बन गया। इस सवाल के सुलझाने के लिये विद्वान् उपदेशकों को बुलाकर पूछना चाहिये।"

जब विद्वान लोग आये तो पूँजीपतियों ने अपना सवाल उनके सामने रखा। कुछ विद्वानों ने कहा—"इस आफ़त का सबब जरूरत से ज़्यादा पानी इकट्ठा हो जाना है।" दूसरों ने कहा—"यह हालत आपस में विश्वास की कमी के सबब से पैदा हुई है।" तीसरे दल वालों ने कहा—"इस वर्ष में पांच सूर्य ग्रहण पड़े हैं उन्हीं के फल से यह खराबी पैदा हुई है।" जब कि उपदेशक लोग इस तरह अपनी अपनी राय जाहिर कर रहे थे तब पूंजीपति लोग ऊंघ रहे थे; क्योंकि यह भी अमीरी का एक चिन्ह समझा जाता था। जब वे जगे तो विद्वानों से कहने लगेः—"बस, बहुत ठीक है। आपकी बातें बड़ी अक़लमन्दी की हैं। अब आप पानी भरने वाले लोगों के पास जाकर उनको भी ये बातें समझा दीजिये, जिससे वे चुपचाप बैठे रहें और हल्ला-गुल्ला मचा कर हमको तङ्ग न करें।

पर उपदेशकों को उन लोगों के पास जाने में बहुत डर लगता था। लोग उनकी थोथी बातों को पसन्द नहीं करते

थे और उनसे झगड़ा करने को तैयार हो जाते थे। इसलिये उन्होंने पूँजीपतियों से कहा--"मालिक हमारी विद्या की यह ख़ासियत है कि जिस आदमी का पेट ख़ूब भरा होता है और जिसके पास बहुत सा पानी होता है उसी को हमारी बातें अच्छी मालूम होती हैं। पर जिस आदमी का पेट खाली हो और जिसे प्यास लगी हो उसे हमारी बातों में कुछ मजा नहीं आता और वह उल्टा चिढ़ता है।" पूँजीपतियों ने कहा—"जाओ, क्या तुम हमारे आदमी नहीं हो? तुमको हमारा हुक्म मानना होगा।"

तब उपदेशक पानी भरने वाले लोगों के पास जाकर उनको अर्थशास्त्र का लैक्चर सुनाने लगे। उन्होंने बतलाया कि किस तरह तालाब में पानी बढ़ जाने से पानी का अकाल पड़ गया और लोगों को प्यासा मरना पड़ रहा है। उन्होंने विश्वास की कमी और ग्रहण की बातें भी लोगों को समझाईं। पर लोगों को उनकी बातें बिलकुल गप्प जान पड़ीं और वे चिल्ला कर बोले--"तुम गञ्जे सिर वाले लोगों का यहां कोई काम नहीं। तुम हमारे सामने से चले जाओ! क्या तुम इस तकलीफ़ के समय हमसे मजाक करने आये हो? कहीं बहुत ज्यादा चीज़ इकट्ठा हो जाने से भी अकाल पड़ता है! यह कह कर उन लोगों ने उपदेशकों को मारने के लिये पत्थर उठाये और वे अपनी जान लेकर भागे।

पूंजीपतियों ने देखा कि लोगों पर उपदेशकों के व्याख्यानों

का कुछ असर नहीं पड़ा। उनकी नाराजी बराबर ज़्यादा होती जाती है और इस बात का डर है कि शायद वे तालाब से जबरदस्ती पानी लेने की कोशिश करें। तब उन्होंने बहुत से साधू और महन्तों को बुलाया जो दरअसल ढोंगी मनुष्य थे। ये नकली साधू लोगों को इस तरह समझाने लगे:—

"हे मनुष्यो, परमेश्वर की आज्ञा है कि तुम्हारे ऊपर जो कष्ट आया है उसे तुम शान्ति के साथ सहो और पानी की इच्छा मत करो। ऐसा करने से तुम्हारी आत्मा पवित्र बनेगी और मरने के बाद तुम स्वर्ग भेजे जाओगे; जहां कोई पूँजी-पति नहीं है और चाहे जितना पानी मिलता है। पर अगर तुम पूँजीपतियों के पानी को जबरदस्ती लेने की कोशिश करोगे तो तुमको बड़ा पाप लगेगा और तुम अनन्त काल तक नरक में पड़े कष्ट भोगते रहोगे।"

पर कुछ धर्म-प्रचारक सच्चे भी थे और ईश्वर के हुक्म के मुताबिक चलना अपना फ़र्ज समझते थे। उन्होंने पूँजी-पतियों की तरफ़दारी नहीं की और उनकी बुराइयाँ लोगों को समझाईं।

पूँजीपतियों ने देखा कि लोग न तो उपदेशकों के व्याख्यानों से समझे और न उन्होंने धर्मप्रचारकों की नसीहत पर ध्यान दिया। वे अब भी पूँजीपतियों के खिलाफ़ बात करते हैं। तब पूँजीपति तालाब के किनारे आये और पानी में

उङ्गलियाँ डुबा कर लोगों को पानी बूँदें बांटने लगे। इन बूंदों का नाम 'दान' था और इनका स्वाद बड़ा खारी था।

पूँजीपतियों ने देखा कि लोगों पर 'दान' का भी कुछ असर नहीं पड़ा। वे प्यास की तकलीफ़ के कारण गुस्से में भर कर तालाब के किनारे इकट्ठे हो रहे हैं और शायद् जबरदस्ती पानी पर कब्जा कर लेंगे। तब उन्होंने आपस में छुप कर कुछ सलाह की और अपने कुछ जासूस लोगों में भेजे। उन जासूसों ने उन लोगों में से सबसे ज़्यादा ताक़तवर और लड़ने के काम में होशियार लोगों को तलाश किया। जासूसों ने उनके कानों में चुपके से कहा:—"तुम लोग पूँजोपतियों के साथ मिल कर क्यों नहीं रहते? अगर तुम पूँजीपतियों के आदमी बन कर रहोगे और इन प्यासे लोगों से तालाब की हिफ़ाजत करोगे तो तुमको भरपेट पानी मिलेगा और तुम अपने बाल-बच्चों के साथ आराम से गुजर कर सकोगे। तुम हमारे साथ चलो।"

जासूसों की इन चिकनी-चुपड़ी बातों को सुन कर वे ताक़तवर और लड़ाई में होशियार आदमी उनमें फँस गये। क्योंकि वे प्यास के सबब से बड़ी तकलीफ़ पा रहे थे। वे पूँजीपतियों के पास गये और उन्होंने इन लोगों के हाथों में तलवार, बन्दूक और लाठियाँ दीं। वे लोग तालाब की रख-वाली करने लगे और जब कभी प्यासे लोग जबरदस्ती तालाब

से पानी लेने की कोशिश करते तो मार मार कर उनको हटाने लगे।

* * *

कुछ दिनों बाद तालाब का पानी घट गया। क्योंकि पूँजी-पतियों ने अपने शौक़ के लिये फब्बारे और रङ्गीन मछलियों के कुण्ड बनाये। इसके सिवा उनके लड़कों, बच्चों और औरतों ने नहाने धोने, खेल तमाशे में बहुत सा पानी खर्च कर दिया। इस तरह कुछ दिनों में तालाब का बहुत सा पानी निकल गया।

जब पूँजीपतियों ने देखा कि तालाब खाली हो चला तो वे कहने लगे कि—"अब व्यापार-संकट ख़त्म हो गया।" उन्होंने तालाब में पानी भरने के लिये लोगों को फिर नौकर रक्खा। लोग पानी का जो एक डोल तालाब में लाते थे उसका दाम एक आना मिलता था और पूँजीपति तालाब में से जो एक डोल पानी निकाल कर बेचते थे उसका दाम दो आना लगता था। इस तरह उनको ख़ूब फायदा होता था। थोड़े दिनों में बहुत सा पानी इकट्ठा हो गया और तालाब फिर लबालब भर गया। पूँजीपतियों ने यह देख कर फिर लोगों को नौकरी से छुड़ा दिया।

जब इस तरह लोगों ने तालाब को बार बार किनारे तक भरा और इसके बाद उनको उस समय तक बेकारी के सबब से प्यासा मरना पड़ा जब तक कि पूँजीपति और उनके घर

के लोग उस पानी को खर्च या बरबाद न करदें, तब ऐसा समय आया कि उस देश में कुछ नये लोग पैदा हुए जिनका नाम आन्दोलनकारी था। इन आन्दोलनकारियों ने पानी भरने वाले लोगों को समझाया कि अगर वे आपस में सङ्गठन करके (मिलकर) काम करें तो उनको पूँजीपतियों का नौकर नहीं रहना पड़ेगा और न पानी की कमी से प्यासा मरना पड़ेगा। पूँजीपतियों की निगाह में ये आन्दोलनकारी प्लेग के कीड़ों की तरह भयङ्कर थे और वे चाहते थे कि उनको मार कर खत्म कर दिया जाय। पर लोगों के डर से वे ऐसा न कर सके।

आन्दोलनकारी पानी भरने वाले लोगों को जो उपदेश देते थे वह इस तरह थाः—

"हे अनसमझ मनुष्यो, तुम कब तक झूँठी बातों पर भरोसा करके ठगाते रहोगे। ये पूँजीपति और उनके उपदेशक तुमसे जो बातें कहते हैं वे सब चालाकी से भरी हैं। इसी तरह ढोंगी साधू महन्त तुमको बहकाते हैं कि यह ईश्वर की मरजी है कि तुम सदा भूखे और प्यासे रहो। पर यह तो विचारो कि तुमको पानी की कमी क्यों होती है? इसका सबब यह है कि उसके खरीदने को तुम्हारे पास पैसा नहीं होता। तुम्हारे पास पैसे की कमी क्यों होती है? इसका सबब यह है कि तुम इस बाजार रूपी तालाब में डालने के लिये जो एक डोल पानी लाते हो उसका दाम तुमको एक आना मिलता

है पर जब तुम अपने पीने के लिए इसमें से एक डोल पानी लेते हो तो उसका दाम दो आना देना पड़ता है। इस तरह मालदारों को आधा डोल पानी नफ़ा में बचता है। तुमको जितनी तनख़ाह मिलती है उससे तुम आधे पानी से ज्यादा हरगिज़ ख़रीद ही नहीं सकते। क्या तुम यह नहीं समझ सकते कि इस तरीक़े से तालाब के पानी का जरूरत से ज्यादा बढ़ जाना लाज़मी है? एक तरफ़ तो तुमको पानी की कमी से तकलीफ़ उठानी पड़ती है और दूसरी तरफ़ तालाब में पानी बरबाद होता है। इस लिए तुमको अच्छी तरह यह समझ लेना चाहिये कि तुम जितना ज़्यादा काम करोगे और पानी इकट्ठा करने की जितनी ज़्यादा कोशिश करोगे उतना ही तुम्हारे हक में बुरा होगा।"

आन्दोलनकारी बहुत दिनों तक लोगों को इस तरह समझाते रहे, पर किसी ने उनकी बातों पर ध्यान नहीं दिया। अखीर में बहुत बरसों बाद कुछ लोग उनकी बातें सुनने लगे। उन्होंने आन्दोलनकारियों से कहाः—

"तुम जो कहते हो वह सच है। हमारी तकलीफ़ों का सबब पूँजीपति और उनका नफ़ा ही है। उनके नफ़े के सबब से ही हमको हमारी मिहनत का फल नहीं मिलता। हम जितनी ज़्यादा मिहनत करते हैं उतनी ही जल्दी तालाब भर जाता है और तब हमको आधा पानी भी मिलना बन्द हो जाता है। पर इसका क्या इलाज हो सकता है? ये पूँजीपति

बड़े सख़्त दिल के आदमी हैं और उनकी दयापूर्ण बातें कोरी दिखावटी हैं। अगर तुमको कोई ऐसा रास्ता मालूम हो जिससे हम उनके बंधन से छूट सकें तो बतलाओ। पर अगर तुमको हमारे छुटकारे का कोई सच्चा रास्ता नहीं मालूम है तो कृपा करके चुपचाप बैठे रहो जिससे कम से कम हम अपने दुःखों को भूल सकें।"

आन्दोलनकारियों ने जवाब दिया—"हमको एक रास्ता मालूम है जिससे तुम्हारे दुःख दूर हो सकते हैं।"

लोगों ने कहाः—"देखो, हमको धोखा मत देना। क्योंकि हमारी यह हालत सदा से चली आई है और इससे छूटने का उपाय ढूँढते ढूँढते कितने ही आदमी मर गये। इस लिए अगर सचमुच तुमको कोई रास्ता मालूम हो तो जल्दी हमको बतलाओ।"

तब आन्दोलनकारी लोगों को समझाने लगेः—"तुमको इन पूँजीपतियों की ऐसी क्या जरूरत है जिसके लिये तुम उनको अपनी मिहनत में से एक बड़ा हिस्सा देते हो? वे तुम्हारे लिए ऐसा कौन बड़ा काम करते हैं जिसके बदले में उनको इतनी बड़ी भेंट दी जाय? उनका काम सिर्फ़ यह है कि वे तुम्हारा सङ्गठन कर देते हैं, तुम्हारे अलग अलग दल बना देते हैं, और हर एक दल को जुदा जुदा काम बतला देते हैं। इस के बाद तुम जो पानी लाते हो उसी में से वे थोड़ा पानी तुमको दे देते हैं। अब इस तकलीफ़ से छूटने की

तरकीब सुनो। जो काम तुम्हारे लिए पूँजीपति करते हैं उसे तुम ख़ुद ही कर लो। तुम ख़ुद अपना सङ्गठन करो, अपने अलग अलग दल बनालो और अलग अलग काम बांट लो। इस तरह तुम को इन पूँजोपतियों को कोई जरूरत नहीं रहेगी और न उनको कुछ नफ़ा देना पड़ेगा। तुम लोग मिहनत करके जो पानी लाओगे उसे भाइयों की तरह सब आपस में बाँट लोगे। जब हर एक आदमी को उसकी जरूरत के मुताबिक काफ़ी पानी मिलने लगेगा तो तालाब कभी हद से ज़्यादा नहीं भरेगा। फिर अगर कभी पानी बहुत बढ़ जाय तो तुम भी अपने दिल बहलाव के लिए फव्वारे और मछलियों के कुण्ड बना सकते हो, जैसा कि आजकल पूँजीपति लोग करते हैं। पर ये दिलबहलाव की चीज़ें सब के वास्ते होंगी।"

लोगों ने कहा—"हम इस काम को किस तरह से करें? क्योंकि यह बात हमारे फ़ायदे की मालूम होती है।"

आन्दोलनकारियों ने जवाब दिया:—"तुम अपने में से कुछ होशियार आदमी चुनो जो तुम्हारा सङ्गठन कर सकें; तुम्हारे अलग अलग दल बनावें; और सब लोगों से अपनी देख-रेख में काम लें, जैसा कि आज कल पूँजीपति करते हैं। पर याद रखो कि ये आदमी पूँजीपतियों की तरह तुम्हारे मालिक नहीं होंगे। ये तुम्हारे भाइयों की तरह ही रहेंगे और तुम्हारी मरजी के मुताबिक काम करेंगे। ये अपने लिए अलग नफ़ा न लेंगे, बल्कि इन लोगों को भी दूसरे लोगों की

तरह एक हिस्सा या दूसरों के बराबर तनख़ाह मिलेगी। फिर समय समय पर तुम इन लोगों की जगह नए आदमी चुन सकते हो, जो इसी तरह तुम्हारा सङ्गठन करेंगे।"

इन बातों को लोगों ने खूब कान लगा कर सुना और दिल से पसन्द किया। ये बातें उनको अपने भले की मालूम हुईं और इनका कर सकना भी कठिन नहीं जान पड़ा। इस लिए वे एक आवाज से बोलेः—"जैसा तुम कहते हो वही हो। हम इस काम को जरूर कर सकते हैं।"

लोगों की इस एक मिली हुई आवाज को पूँजीपतियों ने सुना, उपदेशकों ने सुना, धर्मप्रचारकों ने सुना, सिपाहियों और अफ़सरों ने सुना। लोगों की आसमान को फाड़नेवाली इस आवाज को सुन कर वे सब काँपने लगे और उनके घुटने डर से आपस में टकराने लगे। वे एक दूसरे से कहने लगे-"क्या हम लोगों का अन्तकाल आ पहुंचा?"

* * *

अब लोग आन्दोलनकारियों के उपदेश के माफिक काम करने लगे और कुछ ही दिनों में उनके तमाम दुःख दूर हो गये। अब उस देश में न कोई प्यासा रहता था, न कोई भूखा मरता था, न किसी को नंगा फिरना पड़ता था, न जाड़े में तकलीफ़ उठानी पड़ती थी, और न किसी दूसरी तरह की जरूरत सताती थी। हर एक आदमी दूसरे आदमी को अपने भाई की तरह समझता था और हर एक औरत दूसरी औरत

को बहिन कह कर पुकारती थी। सब लोग एक घर के आदमियों की तरह रहते थे और फिर कभी उनको किसी तरह के दुःख का सामना नहीं करना पड़ा।

श्रमजीवियों को सन्देश



श्रमजीवी कौन हैं ?

श्रमजीवी कौन हैं ? हर एक आदमी जो अपने हाथ से, पैर से, दिमाग़ से मिहनत करके खाता है श्रमजीवी है। फिर चाहे वह किसान हो, मजदूर हो, कारीगर हो, क्लर्क हो, स्कूल-मास्टर हो, पोस्टमैन हो, रेल का बाबू हो या सरकारी नौकर हो। आप कहेंगे कि मिहनत करके तो सभी खाते हैं। बड़े-बड़े राजाओं को भी काम करना पड़ता है। बड़े-बड़े सेठ, साहूकार, धनवान, जमींदार, मालगुजार आदि भी कुछ न कुछ मिहनत करते ही हैं। उनको सदा अपना कारबार देखना पड़ता है। तब क्या वे भी श्रमजीवी हैं ? नहीं। मिहनत भी कई तरह की होती है। एक मिहनत--श्रम वह है कि एक किसान खेत में जाकर दिन भर हल जोतता है, बीज बोता है, पानी सींचता है। इस मिहनत के फल से अन्न पैदा होता है जिससे सबका पेट भरता है। एक मिहनत वह है कि एक लडका फुटबाल खेलता है। उसमें भी बड़ा परिश्रम करना पड़ता है और वह बिल्कुल थक जाता है। पर इस मिहनत से किसी को कुछ नहीं मिलता। एक मिहनत वह भी है जो चोर को

चोरी करने मे पड़ती है। उसे भी सेन्ध लगाने में एड़ी चोटी का पसीना एक कर देना पड़ता है। पर इस मिहनत से भी किसी का कुछ लाभ नहीं होता। इसलिये यह अच्छी तरह समझ लेना चाहिये कि मिहनत-श्रम उसी का नाम है जिससे सब लोगों का कुछ फ़ायदा हो और कोई उपयोगी चीज़ पैदा हो या बने। भला सेठ साहूकारों के व्याज का हिसाब लगाने से कौनसी नई चीज़ पैदा होती है? जमींदार अगर किसानों को मार-पीट कर पैसा वसूल करता तो उससे किसी को क्या मिलता है? कुछ भी नहीं। ये लोग दूसरों की मिहनत की कमाई छीनने में मिहनत करते हैं। इसलिये ये श्रमजीवी नहीं कहे जा सकते।

श्रमजीवियों के अधिकार और वर्तमान दशा

इससे मालूम हुआ कि संसार में सब चीज़ों पर वास्तव में श्रमजीवियों का अधिकार होना चाहिये। क्योंकि सब चीज़ें उनकी मिहनत से ही पैदा होती हैं या बनती हैं। पर क्या आजकल ऐसा होता है? नहीं, बिल्कुल उलटा हाल देखने में आ रहा है। किसान गेहूँ, चावल आदि जो उत्तम अनाज पैदा करते हैं उनको वह अनाज खाने को नहीं मिलता है। उसे खाते हैं कुछ भी काम न करने वाले मालदार आदमी। और किसान-उसको मोटे अनाज से, जंगल के फल-पत्तों से, साग पात से अपना पेट भरना पड़ता है। फिर देखिये कारीगर, मजदूर

लोग बड़े-बड़े मकान व महल बनाते हैं। पर बन जाने के बाद वे उनके भीतर घुस भी नहीं सकते। उनको सदा गन्दी और अँधेरी कोठरियों या घास-फूस की झोंपड़ियों में रहना पड़ता है। कारखानों में मजदूर लोग बढ़िया-बढ़िया कपड़े बनाते हैं, पर उनको सदा चिथड़े लपेट कर ही दिन बिताने पड़ते हैं। उन कपड़ों को ऐसे लोग पहिनते हैं जिनके पास बहुत सा सोना-चाँदी होता है।

ऐसा क्यों होता है ?

ऐसा क्यों होता है ? इस बात के समझ सकने वाले बहुत थोड़े हैं। अधिकांश लोग इस बात को तकदीर—भाग्य का लेख मान कर सन्तोष धारण कर लेते हैं। कोई समझते हैं कि यह ईश्वर की करनी है, इसमें किसी का वश नहीं। पर वास्तव में बात ऐसी नहीं है। यह ईश्वर और भाग्य की बात इन मालदार और दूसरे की मिहनत पर बैठे-बैठे खाने वाले लोगों ने ही फैलाई है। इसके कारण गरीब लोग मन मार कर कष्ट सहते हैं और अपने लूटने वालों के विरुद्ध सिर नहीं उठाते। तब इन बातों का असली कारण क्या है ? असली कारण आजकल का राजनैतिक, आर्थिक और सामाजिक संगठन है। आजकल राज्य का कारबार मालदार लोगों के हाथ में रहता है। इसलिये वे ऐसे ऐसे क़ानून बना लेते हैं कि जिससे गरीब लोग उनके नीचे दबकर काम करते रहें। आज-

कल रुपये के मामले में बड़ी बड़ी चालाकी के काम होने लग गये हैं। बम्बई, कलकत्ता में फाटका करने वाले लोग रात-दिन लाखों मन चीजों की खरीदने-बेचने का सौदा करते रहते हैं, यद्यपि उनके पास एक छटाक भी चीज नहीं होती। वे केवल बाजार-भाव के माफिक फायदा-नुकसान का लेन-देन करते हैं। इसलिये गरीब लोगों की मिहनत से पैदा हुई चीजें जो अमीरों और मालदार के पास पहुंच जाती हैं उसका कारण सिवाय चालबाजी के, ठगी के और कुछ नहीं है।

ज़मीदार और किसान

उदाहरण के लिये जमींदारों को लीजिये। एक-एक जमींदार के पास दो चार या दस बीस गांव होते हैं, वह इन गांवों के बदले में सरकार को जितना रुपया हर साल देता है, उससे चौगुना अठगुना किसानों से वसूल कर लेता है। वह न तो, खेतों को जोतता-बोता है, न इस काम में किसी प्रकार की सहायता करता है। अच्छा तो फिर बतलाइये कि वह इतना रुपया किसानों से मुफ्त में क्यों वसूल करता है? आप कहेंगे कि उसकी ज़मीन है, वह किसानों से अपनी ज़मीन का भाड़ा-कर लेता है। पर हमारा कहना है कि क्या वह जमींदार ज़मीन को अपने साथ लाया था, या अपने साथ ले जायगा? फिर जमीन उसकी कैसे हुई? हिन्दू शास्त्रों में तो स्पष्ट लिखा है कि जमीन उसी की है जो उसे जोतता-बोत" ह इसलिये

सच्ची बात यह है कि ज़मीन न तो ज़मींदार की है, न उसके बाप की। केवल अपनी ताक़त के जोर से किसी समय उसके बाप-दादों ने उस ज़मीन पर कबजा कर लिया, या किसी राजा, बादशाह ने खुश होकर ज़मीन उसे इनाम देदी। यद्यपि अब तक लोग समझते हैं कि राजा, बादशाह को इस प्रकार ज़मीन इनाम देने का हक है और जमींदार को किसानों से जितना चाहे उतना लगान लेने का हक है, पर दरअसल यह बात बिल्कुल गलत-भ्रमपूर्ण है। राजा बादशाह तो केवल इस मतलब से कि ये जमींदार बनने वाले लोग प्रजा को दबाये रहें और हमारी सहायता करते रहें, लोगों को ज़मीन आदि दे देते हैं। पर हम जोर के साथ कह सकते हैं कि ज़मीन ऐसी चीज़ है कि जिसे कोई किसी को नहीं दे सकता। ज़मीन तो जमींदार की तो क्या खुद राजा की भी नहीं, वह तो केवल उस किसान की ही समझी जानी चाहिये जो उसे जोतता है हां, राजा को या, इन्तजाम करने वाली पञ्चायत या, कौंसिल को पैदावार का थोड़ा सा हिस्सा दिया जा सकता है; क्योंकि उनको इन्तजाम के लिये थोड़े बहुत धन की जरूरत पड़ती है। पर शासन-सभा को दिया गया रुपया कहीं जाता नहीं, वह स्कूल, अस्पताल, सड़क आदि के रूप में हमारे लिये ही ख़र्च कर दिया जाता है या हमारी रक्षा के लिये पुलिस, फौज आदि में ख़र्च किया जाता है। पर ये जमींदार हमारे लिये क्या करते हैं? ये तो हम से रुपया लेकर केवल खुद खाते पीते और

मौज उड़ाते हैं। इस प्रकार यह साफ़ मालूम होता है कि जमींदार को किसान से एक पाई लेने का भी हक नहीं है और उसे कुछ भी न मिलना चाहिये।

कारखाने वाले और मजदूर

जो बात जमींदार और किसानों की है वही कारखानों के मालिक और मज़दूरों के लिये भी कही जा सकती है। पहले जमाने में हर एक आदमी अपने घर या दुकान पर बैठकर दस्तकारी, कारीगरी का काम करता रहता था। उसको किसी की नौकरी नहीं करनी पड़ती थी, और वह अपने काम में स्वतंत्र रहता था। पर अब नये-नये आविष्कारों के कारण दशा बिल्कुल बदल गई है। अब स्वतन्त्र कारीगर अपने घर का काम छोड़कर मजदूर बन गये हैं। एक-एक कारखाने में हजारों, लाखों मजदूर काम करते हैं। अगर कारखाने का मालिक कभी एकदम अपना काम बंद करदे तो हजारों आदमी भूखा मर जायँ।

इतना ही नहीं कि कारखानों के कारण लाखों आदमी पराधीन बन गये हैं, वरन् उनकी आर्थिक और सामाजिक दशा भी बहुत ख़राब हो गई है। कारखानों में काम करनेवाले मज़दूरों को प्रायः उतनी ही मजदूरी दी जाती है जिससे वे किसी प्रकार अपना और अपने बाल-बच्चों का पेट भर सकें। पर पेट भरने के सिवाय उनके पास मनुष्यों के समान आराम

और दिल ख़ुश करने के कोई साधन नहीं होते, उनको अपना जीवन गरीबी और दुःख में बिताना पड़ता है। एक तरफ़ मजदूर की दुर्दशा होती है और दूसरी तरफ़ कारखाने के मालिक का धन दिन पर दिन बढ़ता जाता है। वह मौज-शौक में लाखों रुपया उड़ा देते हैं। भाइयो, क्या यह आश्चर्य और खेद का दृश्य नहीं है? एक आदमी तो दस बारह घंटे कमरों में बंद रह कर सख्त काम करता है और उसे जीवन-निर्वाह के लिये काफ़ी ख़र्च भी नहीं मिलता। और दूसरा आदमी जो उसी जगह शानदार आराम कुरसी पर पड़ा रहता है लाखों रुपये पा जाता है। आख़िर इस भेद का सबब क्या है?

इसका सबब बहुत छुपा हुआ नहीं है। कारखाने में मजदूर जब चार रुपये का काम कर देता है तो उसको एक रुपया मजदूरी दी जाती है, बाकी तीन रुपये कारखाने वाले की जेब में जाते हैं। आप शायद फिर कहने लगेंगे कि ये तीन रुपये तो उसकी मशीनों और कारखाने के बदले में हैं। उसने जो दस, बीस लाख रुपया लगाकर कारखाना खोला है आखिर उसको उससे कुछ फ़ायदा भी तो होना चाहिये। ठीक है, पर हम पूछते हैं कि उसके पास कारखाने खोलने को रुपया कहां से आया? क्या हम सदा नहीं देखते कि एक दुकानदार या कोई और व्यापारी आकर छोटी सी दुकान खोलता है और उसको बढ़ाते-बढ़ाते कोठी बना डालता है। फिर वही व्यापारी एक छोटासा कारखाना खोलता है और उसे बढ़ाते-बढ़ाते बड़ी

भारी मिल बना देता है। अब बतलाइये कि उसके पास यह सब रुपया कहां से आता है? क्या वह रुपये की खेती करता है या ज़मीन खोद कर धन निकालता है? नहीं, यह रुपया उन्हीं गरीब मजदूरों की मजदूरी में से बचाया जाता है। ऐसी दशा में यदि यह कहा जाय कि मजदूर ही कारखाने के असली मालिक हैं तो इसमें क्या झूठ है? फिर एक बात ध्यान देने की और है। क्या कारखाने, मशीनें और इञ्जिन अपने आप काम कर सकते हैं, कपड़े और चीज़ें तैयार कर सकते हैं? कभी नहीं। जब तक आदमी उनसे काम न लेगा तब तक वे बेकार हैं, खाली लोहे के टुकड़े हैं। सच्ची बात यह है कि रुपया आदमी की मिहनत से पैदा होता है न कि मशीन और इञ्जिनों से। इसलिये जो कारखाने वाले—मिलों के मालिक बैठे-बैठे लाखों रुपया पाते रहते हैं, उसको सिवाय लूटने या ठगने के और कुछ नहीं कहा जा सकता।

अन्याय के कुछ और नमूने

आजकल संसार में चारों ओर यही हाल दिखलाई पड़ता है कि मालदार लोग गरीबों को लूटते हैं। या इस तरह कहना चाहिये कि कुछ चालाक और शक्तिसम्पन्न (जिनके हाथ में हकूमत हो) आदमी कमज़ोर, निर्बलों और मूर्खों को ठगते और लूटते हैं। पर इस लूटने और चोर-डाकुओं के लूटने में थोड़ा सा भेद है। चोर-डाकू किसी का धन खुल्लमखुल्ला मार-

पीट कर छीनते हैं। पर ये मालदार लोग—सफ़ेदपोश, सभ्य-डाकू चालबाज़ी से, एक रुपये की चीज़ के चार रुपये लेकर और एक रुपये के काम के चार आने देकर, दूसरे का धन लूटते हैं। आजकल की भाषा में इसको Exploitation (एक्सप्लॉयटेशन) अर्थात् कोई कारबार जारी करके उससे फ़ायदा उठाना, कहते हैं। पर असल बात यह है कि आजकल राज्य धनवानों का ही है। परिश्रम, ताक़त और विद्या आदि सब बातें धन के आगे हाथ जोड़े खड़ी रहती हैं। राममूर्ति सरीखा ताक़तवर आदमी जो हाथी को भी अपनी छाती पर चढ़ा लेता है धनवान की खुशामद अवश्य करेगा, जिससे उसे दो चार सौ रुपये ज़्यादा मिल जायँ। मालवीय जी जैसे देशपूज्य भी जाकर मारवाडी सेठों की प्रशंसा में दो चार बात कह देंगे, जिससे उन्हें अपने विद्यालय के लिये दस पाँच लाख रुपये मिल जायँ। और तो क्या महात्मा गांधी जैसे संसार के सर्वश्रेष्ठ पुरुष भी तिलक-स्वराज्य-फण्ड के लिये एक करोड़ रुपया इकट्ठा करने के काम में बम्बई के मालदार लोगों के सामने झुक जाते हैं। सो यह जमाना ही ऐसा है कि इस समय केवल धन की ही पूजा और इज़्ज़त होती है। यही कारण है कि धनवानों के लूटने को कोई बुरा नहीं कहता और उनकी रक्षा के लिये बड़े-बड़े क़ायदे कानून बनाये जाते हैं, बड़े-बड़े अच्छे शब्द ढूँढ़-ढूँढ़ कर उन लोगों के ऐब—दोष को छुपाया जाता है। पर ये सब बातें धनवानों की असली भयंकरता को नहीं छुपा

सकतीं। हम पूछते हैं कि यदि चार रुपये की कीमत के मुलम्मे के गहने को असली सोने का बतलाकर बीस रु० में बेचने वाला सजा पाने का हकदार है तो एक रुपये में तैयार किये गये धोती-जोड़े को चार रुपये में बेचने वाले मिल-मालिक को सजा क्यों न मिलनी चाहिये? अथवा यदि किसी के घर में से चोरी करने वाला व्यक्ति जेलखाने भेजा जाता है, तो दस सेर का अनाज ख़रीद कर उसे पाँच सेर के भाव से बेचने वाले दुकानदार पर मुकद्दमा क्यों न चलाया जाय? यद्यपि ये बातें हजारों वर्षों से होती चली आती हैं और इसलिये ये हमारे स्वभाव में इतनी मिल गई हैं कि हम सहज में उनकी बुराई नहीं समझ सकते, तो भी यदि विचार करके देखा जाय तो एक डाकू, एक चोर और एक कारखाने के मालिक या दुकानदार में कोई विशेष अन्तर नहीं है। भेद केवल लूटने के ढंग का है। हम जानते हैं कि आजकल के समय में बहुत कम लोग हमारी बातों की सचाई को मानेंगे, पर हम अच्छी तरह से साबित कर सकते हैं कि इन बातों में ज़रा भी ग़लती नहीं। इसके लिये एक सच्चा दृष्टान्त सुनिये।

सिकन्दर और डाकू का किस्सा

सिकन्दर के ज़माने में एक डाकू बड़ा ज़बर्दस्त था। उसने सिकन्दर के तमाम राज्य में बड़ी लूटमार मचा रखी थी। अन्त में बड़ी कठिनता से वह पकड़ा गया और सरकारी कर्म-

चारी उसे सिकन्दर बादशाह के सामने लाये। उस समय उन दोनों में इस प्रकार बातचीत हुई।

सिकन्दर—डाकू, तूने मेरे राज्य में बड़ी लूटमार मचा रक्खी थी। मेरी प्रजा को तेरे कारण बड़ा कष्ट हुआ। अब कह तुझे क्या सजा दी जाय?

डाकू—मैंने सजा पाने का कोई काम नहीं किया। वैसे इस समय मैं तुम्हारे कब्जे में हूँ, इससे जो चाहे सो करो।

सिकन्दर—तूने कुछ नहीं किया! तूने हजारों आदमियों का धन, माल लूट लिया; सैकड़ों को जान से मार डाला; बीसियों गाँवों को जला दिया; और फिर भी तू कहता है कि मैंने कुछ नहीं किया?

डाकू—पर यदि मैंने कुछ आदमियों को लूटा है तो तुमने बड़े-बड़े देशों को लूटा है। यदि मैंने थोड़ेसे आदमियों को मारा है तो तुमने जगह-जगह युद्ध करके लाखों मनुष्यों की हत्या कराई है। यदि मैंने दस बीस गाँव जलाये हैं तो तुमने अनेकों बड़े-बड़े सुन्दर शहरों को मिट्टी में मिला दिया है। ऐसी दशा में ज़्यादा कसूरवार तुम हो या मैं?

सिकन्दर—मैंने जो कुछ किया है, वह राजा के धर्म के अनुसार किया है। यदि मैंने लोगों को लूटा है तो लाखों रुपया इनाम भी दिया है। यदि मैंने शहरों को जलाया है तो नये शहर बसाये भी हैं। पर तूने तो डाका डालने के सिवाय कुछ भी नहीं किया।

डाकू—तुम्हारे हाथ में ताक़त है; इसलिये अपने कामों का चाहे जैसा मतलब निकाल लो। नहीं तो वास्तव में जो काम मैंने सौ पचास आदमियों को साथ लेकर किया है वह तुमने लाख पचास हजार आदमियों को साथ लेकर किया है। योंतो मैं भी जो धन अमीरों से लूटता हूँ वह गरीबों को बाँट देता हूँ। मैं सदा अपने साथियों की रक्षा के लिये प्राण देने को तैयार रहता हूँ। मुझ में और तुम में अन्तर इतना ही है कि तुम बड़े डाकू हो।

सिकन्दर ने डाकू की बात मानली:—

....

यही दशा आजकल धनवानों की है। वे भी ग़रीबों को लूटते और ठगते हैं, पर तरकीब के साथ। क्या ग़रीब लोगों से २ पैसा और ४ पैसा फ़ी रुपया ब्याज लेना लुटेरापन नहीं है? जो चीज़ बाज़ार में ४ सेर की बिकती है उस चीज़ को सीधे-सीधे गाँव वाले से ६ सेर की ख़रीदना क्या चोरी करने से कम है? क्या रुपये का काम करके आठ आना मजदूरी देना बेईमानी नहीं है? इन्हीं सब चालाकियों और ठग-विद्याओं के कारण कुछ लोग खूब मालदार हो जाते हैं, लखपती और करोड़पती बन जाते हैं और बाक़ी के तमाम आदमी भूखों मरते हैं और ज़रूरी चीजों के लिये भी तरसते रहते हैं। आज-

कल के व्यापार और व्यवसाय के ढंग का ही यह फल है कि मालदार लोग दिन पर दिन ज़्यादा मालदार बनते जाते हैं, उनका खज़ाना दिन पर दिन बढ़ता जाता है और ग़रीबों का बचा-खुचा थोड़ा सा पैसा भी कम होता चला जाता है।

दूसरे देशों की दशा

ग़रीबों की यह दशा खाली हिन्दुस्तान में ही नहीं है, वरन् सारे संसार की यही गति है। सब देशों में और सब स्थानों में ग़रीब लोग मालदार लोगों की तृष्णा—लालच के शिकार बन रहे हैं। पर यूरोप और अमरीका के ग़रीब लोग (श्रमजीवी लोग) अब अपनी दशा को और मालदार लोगों के अन्याय को समझ गये हैं। उनको मालूम हो गया है कि हमारी कमाई को लूट-लूट कर ही ये थोड़े से लोग असंख्य धन के स्वामी बन बैठे हैं। उनको इस बात का पता लग गया है कि यदि हम लोग काम न करें तो इन मालदार लोगों को एक दिन भोजन भी मिलना मुश-किल हो जाय! क्योंकि ये लोग तो हाथ पर हाथ रखे आराम से समय गुज़ारते रहते हैं। जो कुछ काम होता है और जो कुछ चीज़ें बनाई जाती हैं उस सब के करने वाले और बनाने वाले तो श्रमजीवी, ग़रीब मज़दूर ही हैं। इसलिये अब उन देशों के मज़दूर अपनी शक्ति को समझ गये हैं।

इस दशा से कैसे छूटा जाय ?

पर इस दशा में से कैसे छूटा जाय? हम समझते तो बहुत सी बातें हैं, पर सब को कर नहीं सकते। यद्यपि ग़रीब लोग अपने ऊपर होने वाले अन्यायों को जान गये हैं, पर केवल उनके जान लेने से मालदार आदमी अपना काम बन्द नहीं कर सकते। यदि धनवानों को ऐसा न करने के लिये समझाया जाय और धर्म तथा नीति का भय दिखाया जाय तो उससे भी कुछ लाभ नहीं। क्योंकि धन ऐसी चीज़ है कि उसके लिये आदमी प्रायः भले और बुरे का विचार छोड़ देता है। इसलिये इस दशा से छूटने का एकमात्र उपाय यही है कि ग़रीब लोग (श्रमजीवी) आपस में मिलकर, एक होकर मालदार लोगों के अन्याय का विरोध करें। यूरोप व अमरीका में श्रमजीवियों ने यह उपाय काम में लाना शुरू कर दिया है। और इसी को सोशलिज्म (साम्यवाद), कम्यूनिज्म, बोलशेविज्म आदि नामों से पुकारा जाता है। रूस के श्रमजीवियों को अपने उद्देश्य में सफलता भी प्राप्त हुई है। उन्होंने अपने यहां से बादशाह और मालदार लोगों की हकूमत को उखाड़ कर फेंक दिया है। अब वहां जमींदार नहीं हैं और किसान ही अपने खेतों के सोलह आने मालिक हैं। अब वहाँ के कारखानों के मालिक मजदूर ही माने जाते हैं और कारखाने का तमाम मुनाफ़ा उन्हीं को मिलता है। अब वहाँ ऐसी हालत नहीं हैं

अमीरों के सामने तो बढ़िया बढ़िया भोजनों की बीसियों थाली रखी जायँ, उनके कुत्ते बिल्ली भी दूध-मलाई खायँ और ग़रीब लोग रोटी के टुकड़े को भी तरसें। अब वहाँ सबको प्रायः अन्य आवश्यक चीज़ें एकसी और बराबर मिलती हैं।

भारत के श्रमजीवियों का कर्त्तव्य

इस समय भारत के श्रमजीवियों का क्या कर्तव्य है? हमें खेद के साथ कहना पड़ता है कि अभी उनको अपनी दुर्दशा का भी पूरा ज्ञान नहीं है। वे दुःख अवश्य सहते हैं; पर उसका कारण उनको ज्ञात नहीं। इसलिये उनका कर्तव्य यही है कि वे अपने ऊपर होने वाले मालदार और ज़मींदार लोगों के अन्यायों को समझें और उनसे बचने के लिये अपना संगठन करें।

बोलशेविज्म क्या है ?

बोलशेविज्म का अर्थ

बोलशेविज्म रूसी भाषा का शब्द है। इसका असली अर्थ तो 'बहुमत' या 'बड़े दल' से है। पर आजकल यह कम्यूनिज्म की जगह काम में लाया जाता है।

कम्यूनिज्म का मतलब मामूली तौर पर आज कल यह समझा जाता है देश की तमाम सम्पत्ति और पैदावार के साधनों (जैसे ज़मीन, कारखाने, खान, रेल, जहाज़ आदि) पर आम लोगों या जनता का अधिकार रहे। निजी जायदाद का क़ायदा उठा दिया जाय और सब लोग देश में पैदा होने वाली और बननेवाली तमाम चीज़ों का बिना किसी रुकावट के उपभोग कर सकें। यह सिद्धान्त सब से पहिले जर्मनी के एक महात्मा पुरुष कार्लमार्क्स ने निकाला था। उसने सन् १८४७ में इसका एक मसौदा तैयार किया जिसका नाम 'कम्यूनिस्ट-मैनीफेस्टो' है। यह मैनीफेस्टो आज तक साम्यवाद को जानने के लिये सब से प्रमाणिक लेख माना जाता है। कार्लमार्क्स से पहिले भी कितने ही विद्वानों ने ग़रीबों के दुःख दूर करने के लिये कई तरह के सिद्धान्त निकाले थे और उन सब को 'सोशलिज्म' के नाम से पुकारा जाता था। पर वे सिद्धान्त

थोड़े से लोगों के बीच में ही फैले हुये थे और सर्वसाधारण उनमें किसी तरह का भाग नहीं लेते थे। कार्ल मार्क्स ने ही अपने कम्यूनिज़म के सिद्धान्त में सब से पहिले आम लोगों को साम्यवाद के आन्दोलन में शामिल करने पर ज़ोर दिया।

मिहनत पेशा वालों का उदय

कार्ल मार्क्स ने अपने 'कम्यूनिस्ट मैनीफैस्टो' में बतलाया है, कि जब से संसार में मनुष्य-समाज बना है तब से लोग बराबर दो दलों (Classes) में बँटे रहे हैं, और इन दो दलों में सदा झगड़ा होता रहता है। सब से पहिले ज़माने में एक दल मालिकों का था और दूसरा दल उनके .ग़ुलामों का। .ग़ुलाम लोग तमाम काम करते थे और मालिक पड़े पड़े मौज करते थे। एक बड़ा बलवा (क्रान्ति) हुआ और मालिक-.ग़ुलाम वाली समाज मिट गई। इसके बाद एक दल ज़मींदारों या सरदारों का बना और दूसरा किसानों का। धीरे धीरे सरदारों के .ज़ुल्म किसानों पर बहुत बढ़ गये। फिर बलवा हुआ और सरदार लोगों को मारकर ख़तम कर दिया गया।

सरदारों की समाज का नाश करने वाले मध्यम दर्जे के लोग थे। उनका मुख्य काम व्यापार और दस्तकारी था। इन लोगों ने बहुत जल्दी तरक़्क़ी की और कुछ ही समय में ऐसे ऐसे भारी काम कर दिखाये जिसे आज तक कोई न कर सका था। उन्होंने पुराने ढङ्ग की बादशाहतों को बिलकुल बदल

दिया और पार्लीमेंट के ढङ्ग की हकूमत जारी की। धनवानों ने मशीनों के जरिये दस्तकारी, खेती और आने जाने के पुराने तरीक़ों को बिलकुल बदल दिया। उन्होंने साइन्स की मदद से सब चीज़ों की पैदावार को इतना बढ़ा दिया जितना अब तक कोई ख्याल भी न कर सका था।

पर इतनी तरक़्क़ी कर लेने पर भी आज धनवानों को अपने नाश होने का डर मालूम हो रहा है। एक नया दल मज़दूरों या मिहनत पेशा वालों का पैदा हो गया है। शुरू में मज़दूरों की मदद से ही धनवानों ने तरक़्क़ी की थी, बड़े-बड़े काम करके दिखाये थे, अपनी दौलत और वैभव को बढ़ाया था। पर अपना स्वार्थ सिद्ध करने के लिए धनवानों ने मजदूरों पर अन्याय भी बहुत किया, और उनके सुख दुःख का ध्यान बिलकुल छोड़ दिया। धीरे-धीरे मजदूरों का सङ्गठन दृढ़ होता गया और आज उनकी ताक़त धनवानों से ज़्यादा हो गयी है। जिस प्रकार धनवानों के दल ने सरदार या ज़मींदारों के दल को नष्ट कर दिया उसी प्रकार अब मज़दूरों का दल धनवानों के दल को ख़तम कर देना चाहता है।

पूंजीवाद के दोष

धनवानों के कारण जहाँ पैदावार की बढ़ती हुई है; वहां अकाल दरिद्रता बीमारियां और भयङ्कर युद्ध आदि दोष भी बहुत फैल गये हैं। धनवानों के दल या पूँजीवाद के कारण पैदा होने

वाले दोषों का वर्णन मार्क्स ने बहुत विस्तार के साथ किया है। उसका सारांश यह है कि इस ज़माने में व्यापार और दस्तकारी के क़ायदे ऐसे बनाये गये हैं जिससे एक बड़े भारी कारबार पर दो एक आदमियों का पूरा कब्ज़ा (Monopoly) हो जाता है। बाक़ी तमाम लोगों को उनकी मज़दूरी या नौकरी करने के सिवाय और कोई रास्ता नहीं रहता। इन मज़दूरों को सिर्फ़ थोड़ी सी मज़दूरी मिलती है। असली फ़ायदे में उनका कोई हिस्सा नहीं होता। इस तरह से एक कारबार में जो फ़ायदा होता है उससे दूसरे नये नये कारबार खोले जाते और पैदावार बढ़ाई जाती है। पर इसका दूसरा नतीजा यह होता है कि माल ज़रूरत से ज़्यादा बनने लगता है और उसको बेचने के लिये नये नये बाज़ार ढूँढ़ने पड़ते हैं। साथ ही जब मज़दूर देखते हैं कि हमारी मिहनत से दूसरे लोग तो मालदार बनते चले जाते हैं, और हम जैसी की तैसी बुरी हालत में पड़े हैं, तो उनमें बेचैनी फैलने लगती है। इस तरह पूँजीवाद के शुरू के ज़माने में तो नई-नई मशीनें निकाली जाती हैं; संसार के कोने-कोने में पहुँचने की कोशिश की जाती है, तमाम मुल्कों को एक दूसरे से मिलाने और आपस में ताल्लुक़ पैदा करने का उपाय किया जाता है—पर थोड़े दिन बाद यह नतीजा देखने में आता है कि अपना-अपना माल बेचने के लिये आपस में चढ़ा-ऊपरी (प्रतिद्वन्दिता) होने लगती है, और मालदार लोग आपस में ही झगड़ने

लगते हैं। तमाम दौलत गिनती के थोड़े से आदमियों के पास इकट्ठी हो जाती है और बाकी सब लोग धनकी कमी के कारण तकलीफ़ पाने लगते हैं। अन्त में यह झगड़ा युद्ध के रूप में बदल जाता है और तमाम संसार में मारकाट और रुपये पैसे की गड़बड़ी फैल जाती है। इस तरह धनवान लोग अपने दोष से ही अपनी बर्बादी का सामान पैदा कर लेते हैं और संसार की बागडोर उनके हाथ से निकल कर मिहनत पेशा लोगों के हाथ में चली जाती है।

मिहनत पेशा लोगों का कार्यक्रम

यूरप के इतिहास और मिहनत पेशा लोगों के आन्दोलन पर बहुत विचार करने के बाद मार्क्स ने यह नतीजा निकाला था कि जब तक धनवानों की हकूमत को बिल्कुल ख़तम नहीं कर दिया जायगा तब तक मिहनत पेशा लोगों को कामयाबी हासिल नहीं हो सकती। अगर मिहनत पेशा लोग फ़तह पाने के बाद पुरानी हकूमत (शासन-प्रणाली) को ज्यों का त्यों रहने दें तो उनको धोखा खाना पड़ेगा। सन् १८७१ में पैरिस में मज़दूरों का जो राज्य क़ायम हुआ था, वह इसी कारण से सिर्फ़ दो महीने के भीतर नष्ट हो गया। इसलिये यह ज़रूरी है कि मिहनत पेशा वाले पूँजीशाही हकूमत पर फ़तह पाते ही उसे एकदम नष्ट कर दें और अपनी नये ढङ्ग की हकूमत क़ायम करें। इस हकूमत में तमाम ताक़त मज़दूरों, किसानों और दूसरे नौकरी

पेशा वालों की कमेटियों या पञ्चायतों के हाथ में रहनी चाहिये।

कम्यूनिस्ट यह भी कहते हैं कि धनवान सहज में या राजी से अपनी हकूमत को नहीं छोड़ेंगे। पहिले ज़माने में भी जब एक दल (Class) ने दूसरे दल के हाथ से हकूमत ली थी तो दुनिया में घोर युद्ध और बलवे हुये थे। इसलिये अब अगर मिहनत पेशा दल (Prolitariat Class) धनवानों के दल (Captalist Class) के हाथ से दुनिया की बागडोर लेना चाहता है तो इसके लिये उनकी हकूमत को ज़बर्दस्ती लौट देना पड़ेगा।

अब तक का इतिहास

कार्ल मार्क्स ने जो सिद्धान्त निकाले थे उनको काम में लाने की कोशिश सबसे पहिले सन् १८६४ में की गई। उस वर्ष तमाम देशों के साम्यवादी नेताओं की एक सभा हुई जिसे प्रथम इंटर नेशनल (अन्तर्राष्ट्रीय सभा), कहा जाता है। यह सभा केवल कम्यूनिस्टों की ही न थी वरन् उसमें साम्य-वाद के अलग-अलग सिद्धान्तों को मानने वाले कई दल शामिल थे। इतनी बात ज़रूर थी कि उस सभा में क मार्क्स का हाथ ज़्यादा था और उसी ने उसके उद्देश्य, सिद्धान्त और नियमों को बनाया था। यह सभा सन् १८७२ तक क़ायम रही। उसके बाद अनारकिस्ट पार्टी के नेता

बकुनिन के साथ मार्क्स का मतभेद हो गया और वह टूट गई। सन् १८८९ में फिर दूसरी इंटरनेशनल कायम की गई। इसने मार्क्स के सिद्धान्तों को पूरी तरह से मान लिया। यह इंटरनेशनल सभा थोड़े साम्यवादी नेताओं की कमेटी न थी वरन् इसमें ऐसे बड़े-बड़े दल शामिल थे जिनके मेम्बरों की संख्या लाखों थी। इस तरह दूसरी इंटरनेशनल ने मिहनत पेशा लोगों को सङ्गठित कर दिया। पर लोगों को क्रान्ति के लिये तैयार करने का काम फिर भी बाकी रह गया। इस काम को आज कल तीसरी इंटरनेशनल (बोल्शेविक) पूरा कर रहे हैं।

बोलशेविज्म का उद्देश्य

कम्यूनिज्म का नया रूप जिसको आम लोग बोलशेविज़्म के नाम से पुकारते हैं, पिछले महायुद्ध के ज़माने से पैदा हुआ है। बोलशेविकों ने सन् १९१७ में रूस की पुरानी बाद-शाहत को ख़तम करके वहाँ पर किसानों और मज़दूरों का राज्य कायम किया। सन् १९१९ में बोलशेविकों ने सब देशों के कम्यूनिस्टों को संगठित करके तीसरी इंटरनेशनल क़ायम की। इस इंटरनेशनल की तरफ से सन् १९२० में जो कांग्रेस हुई थी, उसमें बोलशेविकों ने अपना नया घोषणा-पत्र (मेनीफ़ेस्टो) पेश किया। उस घोषणा-पत्र में बतलाया गया है कि—'अगचें युद्ध बंद हो गया है और

लड़ने वाले देश आपस में सुलह कर रहे हैं, पर सच्ची शांति अभी कोसों दूर है। जिस दिन पहिला महायुद्ध ख़तम हुआ, उसी दिनसे दूसरे महायुद्ध की तैयारी होने लग गई है। यूरोप, अमरीका के देशों में लागडाट पहिले से भी ज़्यादा बढ़ती जाती है, और रुपये का बाज़ार दिन पर दिन ख़राब होता जाता है। अगर संसार इस नाशकारी महायुद्ध से बचना चाहता है तो इसका एकमात्र रास्ता यही है कि दुनिया में से धन की प्रधानता (पूँजीवाद) को ख़तम कर दिया जाय और ग़रीब लोगों को उनका पूरा हक़ मिलने लगे।

"धनवानों की हकूमत या पूँजीवाद (कैपटेलिज्म) के नाश होने का समय अब पास आ गया है। पिछले महायुद्ध का एक फल यह हुआ है, अबतक पूँजीवाद की जिन बुराइयों को थोड़े से साम्यवादी लोग ही समझते थे, उनको अब संसार के करोड़ों आदमी साफ़ तौर पर देख रहे हैं और समझ रहे हैं। यह धनवानों की हकूमत या पूँजीवाद का ही फल है कि संसार में इतनी मारकाट हुई और उसके फल से लोग भूखों मर रहे हैं, ठण्ड से बचने को कपड़े नहीं पाते, तरह तरह की बीमारियाँ फैल रही हैं, और मनुष्य एक दूसरे के दुश्मन बनते जाते हैं। पहिले बहुत से नर्मदल के लोग विचार किया करते थे कि पूँजीवाद या धनवानों को नष्ट किये बिना ही संसार में शांति और सुख फैलाने की कोशिश की जाय। पर अब वे अपनी ग़लती को समझ गये हैं। सैकड़ों वर्षों तक

परिश्रम करके लोगों ने जो पारलीमेंट, प्रजातंत्र आदि शासन कायम किये थे, और तरक़्क़ी की जो बड़ी-बड़ी तदबीरें सोची थीं; उन सबको पूँजीवाद के कारण होने वाले एक ही महायुद्ध ने चौपट कर दिया।

"महायुद्ध के कारण यूरोप के निवासी ही नहीं, वरन् तमाम संसार के रहने वाले तरह तरह के कष्टों में फँस गये हैं। उनके उद्धार का रास्ता बोलशेविज्म के सिवाय और कुछ नहीं है। इस समय संसार में जैसी घोर हलचल मची हुई है, उसे देखते हुये एक ऐसी मज़दूर ताक़त की ज़रूरत है जो बराबर मिहनत पेशा वालों को ठीक रास्ता दिखाती रहे और अन्त में संसार पर उनकी हुकूमत क़ायम कर दे। ऐसे समय में पुराने ख़्याल वाले लोगों से कोई काम सिद्ध नहीं हो सकता और हिचक-हिचक कर काम करने वाले लोग करे-धरे पर भी पानी फेर देंगे। सिर्फ मिहनत पेशावालों का मज़बूत सङ्गठन ही संसार को इस तरह नाश होने से बचा सकता है। इसके लिये मिहनत पेशा वालों को ख़ूब ताक़त हासिल करनी चाहिये। सब तरह का सामान इकट्ठा करना चाहिये। और सब लोगों से उनकी ताक़त के मुताबिक काम करना चाहिये। इस तरह कोशिश करने से महायुद्ध का नुक़सान पूरा हो जायगा और संसार की इतनी तरक्की होगी जिसका हम इस समय ख़्याल भी नहीं कर सकते।"

यह ख़्याल करना कि कम्यूनिस्ट पार्टी वाले या बोलशे-

विक लोग संसार में इसलिये क्रान्ति (बलवा) करा रहे हैं कि वे .खुद तमाम देशों के मालिक बन जायँ—सबसे बड़ा और भयंकर ग़लती है। कम्यूनिस्ट लोग तो आजकल संसार में मची हुई मारकाट को जल्दी से खत्म करने के लिये यह सब कोशिश कर रहे हैं। क्योंकि जब तक मिहनत पेशा वालों की हुकूमत क़ायम नहीं की जायगी और धनवान दल वालों (पूँजीवादियों) को नहीं दबाया जायगा जब तक यह लड़ाई झगड़े सैकड़ों वर्षों में भी ख़त्म नहीं होंगे। इसका फल यह होगा कि बार-बार महायुद्ध होंगे; घेरा डाल कर लोगों को भूखा मारा जायगा; अकाल और रोग फैलेंगे; आपस में वैर-भाव बढ़ेगा और अन्त में तमाम सभ्यता का नाश हो जायगा।

बोलशेविज़्म और प्रजातन्त्र।

कितने ही लोग बोलशेविकों के ऊपर यह इलज़ाम लगाते हैं कि वे प्रजातंत्र के सिद्धान्तों के ख़िलाफ़ काम करते हैं। यह सच है कि बोलशेविक आज कल के प्रजातंत्र शासनों को अच्छा नहीं समझते और उनको बदलना चाहते हैं। इसका कारण यह है कि आजकल प्रजातंत्र के नाम से जो हकूमत की जाती है, वह कोरा ढोंग है और प्रजातंत्र के असली सिद्धान्तों के खिलाफ़ है। आज कल के प्रजातंत्र राज्य असल में धनवानों की .खुदमुख़्तार हकूमत है। यद्यपि दिखाने के लिये इनमें सर्वसाधारण को 'वोट' या राय देने का अधिकार दे

रखा है, पर सच पूछा जाय तो यह धनवानों की निरंकुश हकूमत को ढकने का एक पर्दा है। ग़रीब लोग अपनी कङ्गाली और अशिक्षा के कारण वोट का अधिकार पाने पर भी उससे कुछ फ़ायदा नहीं उठा सकते। इसके सिवाय जब मौक़ा आता है तब मालदार लोग इस पर्दे को भी उतार कर फेंक देते हैं। बहुत से लोग कहते हैं कि सर्वसाधारण में शिक्षा फैलाई जाय, जिससे वे अपने हक़ों को जान सकें और 'वोट' के अधिकार का ठीक तरह से उपयोग कर सकें। पर वे यह बात भूल जाते हैं कि शिक्षा और आन्दोलन के साधन; जैसे स्कूल, प्रेस, अख़बार, ख़बरों की एजंसियां आदि भी इस समय मालदारों के ही हाथ में हैं।

कुछ लोगों का यह भी कहना है कि हकूमत की ताक़त फ़ौज़ के हाथ में दे देनी चाहिये, जिससे वह मालदारों की हकूमत को ख़तम कर दे। पर कम्यूनिस्ट इस सैनिक-साम्य-वाद के ख़िलाफ़ हैं। वे कहते हैं कि मिहनत पेशा वालों का उद्धार उनकी ताक़त से ही हो सकता है। कम्यूनिस्ट लोगों का काम इस सम्बन्ध में सिर्फ़ इतना है कि वह मिहनत पेशा वालों को रास्ता दिखलाते रहें। बोलशेविक यह भी समझते हैं कि मालदार लोग अपनी हकूमत और विशेष अधिकारों को क़ायम रखने के लिये सब तरह के राजनैतिक, आर्थिक और फ़ौज़ी उपायों से काम लेंगे। इसलिये मालदारों और ग़रीबों का झगड़ा तब तक कभी ख़त्म नहीं हो सकता जब

तक कि दोनों दलों में एक बार खुल्लमखुल्ला खूब झगड़ा न हो लेगा और मज़दूर उसमें जीत हासिल न कर लेंगे।

बोलशेविकों की कार्य प्रणाली।

इन बातों से बोलशेविकों या काम्यूनिस्टो के काम करने का ढङ्ग बहुत कुछ समझा जा सकता है। कम्यूनिस्ट लोगों को अपने लिये हमेशा मिहनत पेशावालों का एक हिस्सा समझना चाहिये, सदा उनके सङ्गठन की कोशिश करते रहना चाहिये, और मज़दूर तथा किसानों की जो कमेटियाँ पहिले से बनी हों उनका काम चलाते जाना चाहिये। पर साथ ही इस बात का भी ख़्याल रखना चाहिये कि मिहनत पेशा वालों को आगे बढ़ाया जाय और उनको लक्ष्य (निशाने) तक पहुँचने का रास्ता बतलाया जाय। इसलिये कम्यूनिज्म के मानने वालों का फ़र्ज़ है कि वे ख़ुद इन सिद्धान्तों की पूरी पाबन्दी करें, और अपने दल के नियमों को ख़ूब कड़ा बनावें। अपनी भीतरी मज़बूती के साथ मौके से लाभ उठाना भी बोलशेविकों का सिद्धान्त है, क्योंकि इसके बिना क्रान्ति में सफलता नहीं हो सकती। जो लोग इस प्रकार की क्रान्ति (बलवे) में पुस्तकों में लिखे हुये सिद्धांतों से किसी भी दशा में इधर उधर हटना नहीं चाहते और सदा दिखावटी सचाई तथा नकली ईमान्दारी का ढोल पीटते रहते हैं, उनसे कम्यूनिस्टों की राय नहीं मिलती।

कुछ सवालों के जवाब।

सवाल—आप यह कैसे कह सकते हैं कि कम्यूनिज्म या बोलशेविज्म से संसार में से अन्याय मिट जायगा और शान्ति हो जायगी?

जवाब—अभी तक दुनिया के आदमी ऐसे दो दलों में बँट रहे हैं जिनमें से एक दल मिहनत करता है और दूसरा बैठे-बैठे मौज उड़ाता है। बैठे-बैठे खाने वालों का दल सदा दूसरे दल को दबाकर रखने की कोशिश करता है, और इसीसे तरह-तरह के झगड़े और बुराइयाँ पैदा होती हैं। इस समय एक दल धनवानों या मालिकों का है और दूसरा ग़रीबों या मज़दूरों का। ये दोनों दल आपस में लड़ते रहते हैं। बोलशेविक चाहते हैं कि दुनियाँ में एक ही दल रह जाय। पर सब लोग मालिक बन नहीं सकते, क्योंकि बिना नौकरों के मालिकी कैसे हो सकती है? इसलिये दुनियाँ में एक दल मिहनत पेशा वालों का ही रह सकता है। मिहनत पेशा वालों में से फिर कोई दूसरा दल पैदा नहीं हो सकता। इस तरह सब लोग एक हो जायँगे और मिहनत करके खायँगे।

सवाल—आप तो कहते हैं कि कम्यूनिज्म में सब बराबर माने जाँयगे, ख़ुदमुख़्तार रहेंगे और किसी पर दबाव नहीं डाला जायगा। तब वे लोग धनवानों को क्यों दबायेंगे और उनको एक नागरिक के हक क्यों नहीं देंगे?

जवाब—कम्यूनिस्ट या साम्यवादी धनवानों को उसी समय तक दबाये रखने के पक्ष में हैं जब तक वे अपने हाथ से काम न करने लग जायँ। दुनिया में किसी को बैठे-बैठे खाने या हरामखोरी करने का हक़ नहीं है। इसके सिवाय हमारा उद्देश्य दुनियाँ में सिर्फ़ एक दल रखना है। क्योंकि जब तक दो दल रहेंगे तब तक संसार में शान्ति हो नहीं सकती। इसलिये तमाम संसार के भले के लिये एक मुट्ठी भर धनवानों को दबाना, सो भी ऐसा दबाना जिससे दरअसल उनका भी कल्याण होता है, वे बजाय काहिल और बेकार बनने के उद्योगी और परिश्रमी बन जाते हैं—कोई बुरी बात नहीं है।

सवाल—अगर तमाम सम्पत्ति पर आम लोगों का कब्ज़ा मान लिया जाय और हर एक आदमी को जितनी चीज़ वह चाहे लेने की इजाज़त दे दी जाय तो ज़्यादातर लोग काम काज करना छोड़ देंगे और बैठे-बैठे खूब खायँगे?

जवाब—आज कल आदमियों की जैसी आदत पड़ गई है, उससे यह शङ्का बहुत कुछ सच है। इसलिये शुरू में हर एक आदमी को काम करने पर ही खाने को मिलेगा, और बिना सबब बेकार रहने वाले लोगों से ज़बर्दस्ती काम कराया जायगा।

सवाल—अच्छा, दूसरी बात यह है कि अगर सब लोगों को एक सा खाने पहिनने को दिया जायगा, तो लोग काम

करने में ज़्यादा मिहनत क्यों करेंगे, और क्यों बढ़िया काम करने की कोशिश करेंगे ? फिर तो सब लोग जैसे तैसे वेगार टालने लग जायँगे ?

जवाब—हाँ, यह दोष भी आज कल के आदमियों के स्वभाव में घुस गया है। इस लिये यह सोचा गया है कि शुरू में लोगों को उनके काम के मुताबिक चीज़ें दी जायँ। इसपर शायद आप कहने लगेंगे कि फिर इसमें और आजकल की हालत में फ़र्क ही क्या हुआ ? इसका जवाब यह है कि आज-कल के नौकरों की तनख्वाह में इतना फ़र्क रहता है कि एक तो भूखा मरता है और उसे रूखी रोटी भी भर पेट नहीं मिलती और दूसरा अपने कुत्ते को दूध मलाई खिलाता है। पर कम्यूनिज़्म में इतना फ़र्क कभी नहीं हो सकता। उस समय हर एक आदमी को इतना ज़रूर मिलेगा जिससे वह अच्छी तरह खा पी सके। अधिक काम करनेवाला जरा ज़्यादा आराम से रहेगा और थोड़ा काम करनेवाला कुछ कम आराम से।

सवाल—पर तो भी जब कम्यूनिष्ट व्यक्तिगत (निजी) सम्पत्ति को बिलकुल नहीं मानते और कोई आदमी किसी चीज़ को अपना न समझ सकेगा तो लोग आलसी ज़रूर बन जायँगे। फिर आजकल की तरह अपनी पूरी ताक़त, लियाक़त ख़र्च करके काम न करेंगे ?

जवाब—अब से कुछ लाख वर्ष पहिले एक ज़माना था

जब कि हर एक आदमी सिर्फ़ अपना भला और आराम चाहता था। उस समय आदमी का सब से बड़ा काम पेट भरना था, और जिस तरह एक जानवर दूसरे को खाता है उसी प्रकार आदमी एक दूसरे को मार कर भी अपना पेट भरना बुरा नहीं समझता था। तब से तरक्की होते-होते अब ऐसा ज़माना आ गया है कि आदमी के स्वभाव में बहुत कुछ सुधार हो गया है और वह अपने साथ दूसरे का भी भला सोचता है। अब ऐसे भी आदमी बहुत मिलेंगे जो दूसरे के भले के लिये तरह-तरह की तकलीफ़ें उठाते हैं और अपने प्राण तक दे देते हैं। इस तरक्की को देख कर यह अनुमान किया जा सकता है कि एक ज़माना ऐसा भी आवेगा जब कि मनुष्य यह विचार न करके कि मैं कितना खाता हूँ या ख़र्च करता हूँ अपनी ताक़त के मुताबिक पूरा काम करता रहेगा। जिस प्रकार आजकल एक कुटुम्ब के कई आदमी मिलकर रहते हैं, कोई कम कमाता है कोई ज़्यादा, पर खाने के समय यह नहीं सोचा जाता कि ज़्यादा कमाने वाले को अधिक खाने को दिया जाय और कम कमाने वाले को थोड़ा। इसी प्रकार सम्भव है कि आने वाले ज़माने में हर एक आदमी दूसरे तमाम लोगों को अपने कुटम्बी या भाई-बन्धु की तरह समझेगा और उनके लिये अपनी ताक़त के मुताबिक ज़्यादा से ज़्यादा काम करेगा। इसी विश्वास के आधार पर कम्यूनिज्म में व्यक्तिगत सम्पत्ति को न मानकर यह निश्चय किया गया है कि तमाम पैदावार

पर आम लोगों का अधिकार हो और जिस आदमी को जितनी ज़रूरत हो उसको उतना सामान दिया जाय। पर जब तक मनुष्य इतने ऊँचे पर नहीं चढ़ते कि वे सब को अपने कुटुम्बी की तरह समझ सकें, तब तक निजी ज़ायदाद का नियम पूरी तरह से नहीं हटाया जायगा। तब तक सिर्फ़ इतना ही किया जायगा कि ज़मीन कारखाने आदि बड़ी-बड़ी चीज़ों पर समाज का कब्ज़ा रहेगा; जिससे एक आदमी बहुत सा रुपया इकट्ठा न कर सके और दूसरे लोगों को ग़रीब बना कर अपना ग़ुलाम न बना सके। (हमारे बहुत से हिन्दुस्तानी भाई इस बात को सच न मानेंगे कि आज कल के ज़माने में मनुष्यों में स्वार्थ की मात्रा पहिले से कम होती जाती है। पर इसका कारण यह है कि उनको दो चार हज़ार वर्ष से पहिले के इतिहास का ज्ञान नहीं है। इधर कुछ समय से हिन्दुस्तान में उलटा चक्कर चल रहा है, और यहाँ के निवासी पहिले की अपेक्षा नीचे गिरते जाते हैं। पर हम जो बातें लिख रहे हैं वे इससे बहुत पुरानी हैं।)

सवाल—क्या आपकी सम्मति में हिन्दुस्तान में बोलशेविज़्म की सब बातों को चलाना अच्छा है? वे लोग तो धर्म-कर्म कुछ नहीं मानते। इसके सिवाय हम लोगों से उनकी मौजूदा हालत, रीत रिवाज़ों, और रहन सहन में भी बहुत फ़र्क है?

जवाब—नहीं, हिन्दुस्तान में बोलशेविज़्म की तमाम बातों को चलाने की ज़रूरत नहीं है। कम्युनिज़्म के मानने वाले

पुराने ख़्याल के लोगों की तरह अंधविश्वासी या लकीर के फ़कीर नहीं होते। कम्यूनिज़्म या साम्यवाद का मुख्य उद्देश्य तो ग़रीबों पर होने वाले अन्यायों को दूर करना और सब लोगों को उनके असली हक़ दिलाना है। इस उद्देश्य को पूरा करने की कोशिश वे लोग ज़रूर करेंगे, पर जिस देश की हालत जैसी होगी उसके मुताबिक रास्ते से ही काम किया जायगा।
